ओ३म्

परोपकारिणी

पाक्षिक

परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५६ अंक - १२ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र जून (द्वितीय) २०१४

महर्षि दयानन्द सरस्वती

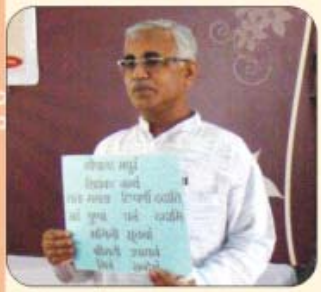

संस्कृत संभाषण प्रशिक्षण शिविर

(२४ से ३१ मई २०१४)

आर्यवीर दल शिविर, ऋषि उद्यान, अजमेर (१६ से २३ मई २०१४)

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५६ अंक : १२
दयानन्दाब्द: १९०
विक्रम संवत्: आषाढ़ कृष्ण, २०७१
कलि संवत्: ५११५
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११५

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-
भारत में
वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में
वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

जून द्वितीय २०१४

अनुक्रम

१. आर्यसमाज के लिए चिन्तन के क्षण	सम्पादकीय	०४
२. क्या अध्यात्म में तर्क सहायक.....	स्वामी विष्वङ्	०६
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	१०
४. अमर शहीद कुं. प्रताप	फतहसिंह मानव	१६
५. सृष्टि-हमारी दृष्टि में	गंगाप्रसाद उपाध्याय	१९
६. आर्यसमाज का प्रथम नियम.....	मणीन्द्र कुमार व्यास	२२
७. पुस्तक - समीक्षा	देवमुनि	२९
८. भूत फैशन का	रमेश मुनि	३०
९. वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन		३३
१०. जिज्ञासा समाधान-६५	आचार्य सोमदेव	३५
११. संस्था-समाचार		३९
१२. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com
- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

सम्पादकीय

आर्यसमाज के लिए चिन्तन के क्षण

भारत के इतिहास में २०१४ का वर्ष एक निर्णायक काल खण्ड है। इस देश में अनेक बार ऐसे अवसर आये हैं जब इतिहास ने करवट ली है। कभी पुष्यमित्र के रूप में, कभी विक्रमादित्य के रूप में तो कभी चन्द्रगुप्त के रूप में, कभी शिवाजी व स्वतन्त्र भारत में सरदार पटेल के रूप में इतिहास के पन्नों पर भारत के पुनर्निर्माण की गाथा लिखी गई है। हर उत्थान के बाद पतन का क्रम प्रारम्भ होता है तथा हर पतन का इतिहास उत्थान के रूप में समाप्त होता है। स्वतन्त्रता के बाद देश को उत्थान की दिशा में जाना था परन्तु शासन की, देशभक्ती, अपने धर्म और संस्कृति में आस्था न होने के कारण वह बड़ी तेजी से फिर दासता की ओर बढ़ रहा था। परन्तु दासता को प्राप्त होता उससे पहले एक चमत्कार हुआ और दासता की ओर बढ़ता देश एकदम करवट लेकर खड़ा हो गया और उत्थान की ओर चल पड़ा। इतिहास के सभी उत्थान-पतन का कालखण्ड बड़ा लम्बा रहा है परन्तु इस युग में स्वतन्त्रता के बाद जिस तेजी से देश का पतन हो रहा था, उसके परिणाम को देखकर देशभक्त और राष्ट्रवादी लोग जिस पीड़ा का अनुभव कर रहे थे उसी अन्धकार में मोदी के रूप में एक नेता ने आवाज दी और सारा देश उसके साथ खड़ा हो गया।

हवा तो चुनाव के समय ही बदल गई थी परन्तु देशवासियों का आशंकित मन परिणाम के बिना विश्वास करने को तैयार नहीं था। चुनाव के बाद पूर्वानुमानों की झड़ी लग गई परन्तु कांग्रेस का सत्ता पक्ष किसी चमत्कार की आशा में डटा रहा। १६ मई के दो घण्टों ने इस आशा के सुखद स्वप्न को यथार्थ के दु:खद धरातल पर खड़ा कर दिया और इतिहास अपने नये रूप में आकार लेने लगा। संसद के केन्द्रीय कक्ष में मोदी को नेता चुना गया और २६ मई को राष्ट्रपति भवन में सायंकाल के समय नये युग का उदय हो गया।

इस नये युग को उदय होता हुआ देखने के लिए चार हजार से अधिक लोग प्रत्यक्षदर्शी आमन्त्रित अतिथि के रूप में विद्यमान थे। इस समारोह में सार्क देशों के रूप में पड़ोसी शासनाध्यक्षों की उपस्थिति एक ऐतिहासिक घटना रही। इस अवसर पर जो भव्यता, उत्साह, सुन्दरता, अतिथियों की विविधता थी जिससे समारोह की सुन्दरता को चार चांद लग रहे थे, अद्वितीय शोभा थी। सम्भवत: पहली बार राष्ट्रपति भवन ने भारतीय परिवेश के गौरव का अनुभव किया होगा। मोदी का अपनी सहज मुद्रा में भारतीय परिधान में दृढ़ व्यक्तित्व के साथ मञ्च पर हिन्दी में शपथ लेना भारतीय आत्मा की प्रसन्नता का अवसर था। अधिकांश शपथ लेने वालों ने हिन्दी में शपथ लेकर भाषा का और देश का गौरव बढ़ाया। दासता से मुक्त होने का अनुभव कराया। इस अवसर पर कुछ लोगों का आज के दिन भी अंग्रेजी में शपथ लेना चिन्तनीय था। अरुणाचल और गोवा के सदस्यों ने हिन्दी में शपथ ली परन्तु मेनका गाँधी को अंग्रेजी में शपथ लेना गौरवपूर्ण कैसे लगा? यह तो वही जानें, परन्तु इस देश की जनता की भाषा को वह नहीं समझ पाई, आश्चर्य की बात है। जिन लोगों ने अंग्रेजी में शपथ ली कितना अच्छा होता वे अपनी प्रान्तीय भाषा में शपथ लेते। पंजाब की राजनीति हिन्दू, हिन्दी द्वेष पर टिकी है, फिर भी सुखवीर सिंह बादल की पत्नी पंजाबी में शपथ लेती तो पंजाब का गौरव बढ़ता। इस समारोह की दूसरी महत्त्वपूर्ण बात थी भारतीय वेशभूषा के लोग बड़ी संख्या में दिखाई दे रहे थे। धोती का गौरव तो भारत के गृहमन्त्री राजनाथसिंह ने रखा परन्तु बाकी लोग भी बड़ी संख्या में भारतीय वेशभूषा में उपस्थित थे। यह प्रसन्नता की बात है। इस समारोह की तीसरी विशेषता हिन्दू साधू-सन्तों, कथावाचकों, नेताओं की अगली पंक्ति में उपस्थिति, यह भारतीय परम्परा के गौरव को प्रदर्शित करने वाली बात थी। स्वामी सत्यमित्रानन्द, स्वामी ज्ञानानन्द, स्वामी रामभद्राचार्य, कथा वाचक किरीट भाई, साध्वी ऋतम्भरा, ऐसे लोग इस समारोह की शोभा बढ़ा रहे थे। ऐसा होना स्वाभाविक था। आज की सरकार भाजपा की सरकार है जिसे संघ ने खड़ा किया है। विश्व हिन्दू परिषद् जिसको संघ ने सामाजिक दायित्व सौंपे हैं, सब साधू-सन्त उसके निर्देशन में चलते हैं, उनका इस समारोह में आना स्वाभाविक था और उचित भी।

इस सारे परिदृश्य में चिन्ताजनक बात थी सारे स्वतन्त्रता आन्दोलनों में अग्रणी भूमिका निभाने वाले संगठन की अनुपस्थिति। कोई भी राष्ट्रीय आन्दोलन हो, उसमें

आर्यसमाज की उपस्थिति न हो ऐसा हुआ नहीं। पहली बार एक बड़े परिदृश्य से जिस में देश के हर वर्ग, हर क्षेत्र का प्रतिनिधित्व था। उस परिदृश्य से आर्यसमाज की अनुपस्थिति किसका दुर्भाग्य कहा जाय। प्रथम यह संगठन का दुर्भाग्य है और दूसरा दुर्भाग्य देश का होगा। आर्यसमाज केवल संगठन या कोई परम्परागत धार्मिक शाखा मात्र नहीं है। आर्यसमाज का दुर्बल होना, सुधारवादी विचारों का दुर्बल होना है। हिन्दुत्व के नाम पर जो विचार समाज में रखे जाते हैं यदि उनका पालन किया जाय तो समाज के पतन के अतिरिक्त कुछ नहीं होगा। हिन्दुत्व में जो कल था वही आज भी है। हिन्दू कहते ही अवतारवाद, जातिवाद, बलिप्रथा, ऊँचनीच, छुआछूत, जड़पूजा, वेद की मान्यता सभी कुछ हमारे सन्त, महन्त, मन्दिर, मठ मानते हैं, यही करते हैं।

क्या मञ्च पर आर्यसमाज की अनुपस्थिति देश में उन्हीं पुरातनपन्थी विचारों की सामाजिक स्वीकृति नहीं हैं? आर्यसमाजी भी यही करेंगे तो इनके होने न होने से समाज पर क्या प्रभाव पड़ता है। आर्यसमाज के विचारों की दुर्बलता से संगठन में दुर्बलता आती है। आज आर्यसमाजी चित्रों पर, मूर्तियों पर मालायें चढ़ाते, पूजा करते और अपने समाज मन्दिरों में भी ऐसा करते देखे जा सकते हैं। ऐसे लोग निष्ठा से शून्य लोग हैं जो सिद्धान्त से परिचित नहीं हैं तथा आर्यसमाज के संगठन में घुस गये हैं और पुरानी रूढ़ियों और अन्ध परम्पराओं को समाज में प्रचलित कराते हैं। आर्यसमाजी दो तरह से पौराणिक बनता है, एक तो पौराणिक मान्यताओं को अपने यहाँ स्वीकार करता है या अपनी परम्पराओं को पौराणिक रूप देता है। देश और समाजों में मूर्खतायें कैसे घर करती हैं, इसका उदाहरण है जब मृत्यु के पश्चात् शान्ति यज्ञ होता है, मृतक का चित्र रखकर उस पर फूल चढ़ाते हैं और माला पहनाते हैं। अब यह मूर्खता केवल आर्यसमाज में होती है ऐसा नहीं है, ऐसे कार्यक्रमों में सम्मिलित होने वाले आर्यसमाजी स्वयं भी ऐसा करते हैं। भारत माता के नाम पर चित्रों पर माला पहनाकर अपने को धन्य समझने की परम्परा चल पड़ी है। ऐसा करने वाले यह भूल जाते हैं कि ऐसा करने व न करने के पीछे सिद्धान्त क्या है? चित्र पर माला चढ़ाओ या जूता चढ़ाओ, चित्र पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता, ऐसा करने वाले के मन में क्या भाव है, तदनुसार ही वह करता है। अजमेर की दरगाह शरीफ में चिश्ती की कब्र पर हिन्दू फूल और चादर चढ़ाता है, अफगानिस्तान में पृथ्वीराज चौहान की कब्र पर जूते मारे जाते हैं। इससे भावना का पता चलता है, वास्तविक हानि तब होती है जब चित्र को भगवान, देवता, जीवित और चेतन मानकर उसकी पूजा और उससे प्रार्थना की जाती है तब ऐसा करने वाले पुरुषार्थहीन होकर, उस जड़ की कृपा पर निर्भर हो जाते हैं। पाखण्ड से स्वार्थ, अकर्मण्यता का जन्म होता है। भारत की दासता का मूल कारण अज्ञान, स्वार्थ, अकर्मण्यता ही रहा है और इसका मूल है जड़ पूजा और पौराणिक समुदाय आज भी जड़ पूजा करना ही हिन्दुत्व मानता है, यदि आर्यसमाज भी यही करता है तो उसके होने की क्या आवश्यकता है।

जब आज संघ और विश्व हिन्दू परिषद् की सत्ता है तो निश्चय ही उसी का प्रचार-प्रसार होगा, सत्ता के लाभ के लिए, सम्पत्ति, संस्था, संगठन पर अधिकार के लिए ऐसे लोगों का अधिक संख्या में समाज में आना और समाज के लोगों का उन कार्यों में भाग लेना स्वाभाविक है, ऐसी परिस्थिति में आप समर्थ और ज्ञानवान नहीं हैं तो अपने को स्थिर रखने में सफल नहीं होंगे। सत्ता के लाभ के लिए धर्म व समाज की संस्थाओं और संगठनों के अधिकारी अपने सिद्धान्तों को छोड़कर स्वार्थ के लिए उधर झुक जायें यह स्वाभाविक है। इससे बचने का इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं कि आर्य सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार पूर्ण योजना और पुरुषार्थ के साथ समाज में किया जाय। ईसाईयत के प्रचार के लिए पादरी तैयार किये जाते हैं। इस्लाम के प्रचार के लिए मुल्ला-मौलवी हैं जिनको तैयार करने के लिए हजारों मदरसे हैं। हिन्दू पुजारी जन्म से मठ मन्दिर की गद्दी सम्भाल रहे हैं सम्भव है आज की सरकार भी उन्हें और प्रोत्साहन दे परन्तु आर्यसमाज की तात्कालिक समस्या है वह अपने को कैसे जीवित रखेगा। आर्यसमाज के लोगों ने संगठन को तोड़कर अपनी स्वार्थ सिद्धि तो कर ली परन्तु संगठन की शक्ति का सर्वनाश कर दिया। यदि आर्यसमाज के प्रतिनिधि को कोई बुलाना चाहे तो उसके पास प्रामाणिक व्यक्ति, संस्था, संगठन का नाम नहीं हैं। मूल बात है सम्मान, सामर्थ्य का किया जाता है, आज आप सामर्थ्य से शून्य हैं तो आपका कोई सम्मान क्यों करेगा। फिर भी आप सम्मान की अपेक्षा करते हैं तो ऐसे व्यक्ति पर सम्मान नहीं, दया की जा सकती है और दया दुर्बल पर की जाती है। दुर्बल होकर कोई समाज का मार्गदर्शक नहीं बन सकता।

शेष भाग पृष्ठ संख्या ९ पर....

आध्यात्मिक चिन्तन के क्षण.....

क्या अध्यात्म में तर्क सहायक नहीं है?

– स्वामी विष्वङ्

बाल्यकाल में बालक वस्तुओं (पदार्थों) को समझने लग जाता है, तो उसे प्रतीति होती है कि मैं वस्तुओं का ज्ञान करने लगा हूँ। मैं जानने लगा हूँ, मैं देखने लगा हूँ, सूँघने लगा हूँ, चखने लगा हूँ, स्पर्श करने लगा हूँ आदि-आदि। बालक को यह भी पता लग रहा होता है कि आँख के बिना देख नहीं सकता, नासिका के बिना सूँघ नहीं सकता, रसना के बिना चख नहीं सकता, त्वचा के बिना स्पर्श नहीं कर सकता और कान के बिना सुन नहीं सकता। इससे यह जानकारी होती है कि बिना साधन के ज्ञान नहीं होता है। यहाँ साधन शब्द से प्रमाण को लेना चाहिए, क्योंकि प्रमाण ज्ञान का साधन बनता है। इसलिए संसार में प्रत्येक मनुष्य प्रमाणों का प्रयोग करता है। कोई भी मनुष्य यह नहीं कह सकता है कि मैं बिना प्रमाणों के व्यवहार करता हूँ या कर सकता हूँ। ऐसा यदि कोई कहता भी है, तो वह स्वयं को धोखा दे रहा होता है, क्योंकि प्रमाणों के बिना व्यवहार नहीं चलता और वह व्यवहार करता हुआ भी यह कहे कि मैं प्रमाणों के बिना चलता हूँ, यह उस मनुष्य का दुराग्रह/हठ ही कहा जा सकता है। इसलिए मनुष्य को विचारपूर्वक बोलना चाहिए। वास्तव में मनुष्य को मनुष्य इसलिए कहा जाता है कि वह मनन (विचार) करके बोलता है। यदि मनुष्य की परिभाषा से हट कर बोले, तो उसे अज्ञानी कहा जाता है।

संसार में दो प्रकार के लोग रहते हैं- पठित वर्ग और अपठित वर्ग। पठित व अपठित दोनों वर्ग प्रमाणों का प्रयोग करते हैं। प्रमाणों का प्रयोग बाल्यकाल से करते हुए आ रहे हैं, वर्तमान काल में भी कर रहे हैं और जब तक जीवित रहेंगे तब तक भविष्य में भी करते रहेंगे। यद्यपि हमने प्रमाणों के सम्बन्ध में विधिवत् विद्यार्थी के रूप में अध्ययन नहीं किया है फिर भी हम प्रमाणों का प्रयोग करते हैं। यदि प्रत्येक मनुष्य प्रमाण सम्बन्धि विद्या को विधिवत् विद्यार्थी के रूप में अध्ययन करे, तो मनुष्य अधिकाधिक दुःखों से छुटकारा पा सकता है। यद्यपि परम्परा से बाल्यकाल से प्रमाणों का प्रयोग हो रहा है फिर भी जानकारी पूर्वक प्रमाणों का प्रयोग करना अधिक सुखदायी बनता है। क्योंकि जान कर प्रमाणों का प्रयोग सदा उचित रूप में किया जा सकता है और अनुचित प्रयोग को रोका जा सकता है। इसके विपरीत न जान कर प्रमाणों का प्रयोग उचित चाहते हुए भी अनुचित कर बैठता है। जिससे सुख के स्थान पर दुःख पाता है। प्रमाणों का दुरुपयोग सदा दुःख का कारण बनता है। इस कारण मनुष्य को चाहिए कि वह प्रमाणों का ज्ञान विधिवत् करे अर्थात् प्रमाणों की विद्या को विद्यार्थी के रूप में अध्ययन करके जाने। जिससे प्रमाणों का यथार्थ विवेक हो सके।

प्राचीन वैदिक परम्परा में अनेक शास्त्र विद्यमान हैं। जिन को गुरुकुलीय परम्परा में रह कर अध्ययन किया जाता है। वेद, उपवेद, ब्राह्मण, वेदांग, उपांग आदि के रूप में अनेक शास्त्र हैं। जिन में उपांग के रूप में ६ प्रकार के शास्त्र हैं, जिन्हें छह शास्त्र या षड् दर्शन भी कहते हैं। उनका नाम इस प्रकार है- मीमांसा, वेदान्त, न्याय, वैशेषिक, सांख्य और योग। इन ६ शास्त्रों में न्याय शास्त्र मुख्य रूप से प्रमाणों की चर्चा करता है। इसलिए इसे प्रमाण शास्त्र भी कहते हैं। इस शास्त्र के प्रणेता महर्षि गौतम मुनि हुए है और इस शास्त्र की विस्तृत व्याख्या करने वाले ऋषि का नाम महर्षि वात्स्यायन है। महर्षि गौतम मुनि कृत न्याय दर्शन और इसकी व्याख्या महर्षि वात्स्यायन कृत वात्स्यायन भाष्य को विधिवत् विद्यार्थी बन कर पढ़ने से प्रमाणों का यथार्थ बोध हो जाता है। जिससे मनुष्य प्रमाणों का उचित प्रयोग करने में सक्षम हो जाता है। प्रमाणों का उचित प्रयोग करके मनुष्य अपने लक्ष्य (-दुःखों से छूटना और परमानन्द को प्राप्त करना) को पूर्ण कर सकता है।

प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः। (न्याय दर्शन १.१.१)

महर्षि वात्स्यायन लिखते हैं कि प्रमाणों के माध्यम से पदार्थों (वस्तुओं) की परीक्षा करना ही न्याय कहलाता है। संसार में जितने भी पदार्थ हैं उनकी परीक्षा प्रमाणों से होती है क्योंकि **'प्रमाणमन्तरेण नार्थप्रतिपत्तिः'** प्रमाण के बिना किसी भी पदार्थ को नहीं जाना जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति यह कहे कि पदार्थों को जानने की कोई आवश्यकता नहीं है, ऐसा कह सकता है परन्तु **'नार्थप्रतिपत्तिमन्तरेण प्रवृत्तिसामर्थ्यम्'।** पदार्थ को जाने बिना मनुष्य की प्रवृत्ति नहीं हो सकती अर्थात् यदि मनुष्य प्रमाणों से किसी वस्तु को नहीं जानेगा, तो उस वस्तु के लिए पुरुषार्थ नहीं कर सकता। क्योंकि मनुष्य का स्वभाव है कि वह पुरुषार्थ

करने से पहले वस्तु को प्रमाणों से जानता है। इसलिए बिना जाने मनुष्य किसी वस्तु के लिए पुरुषार्थ नहीं करता। इसलिए महर्षि वात्स्यायन लिखते हैं कि **'प्रमाणेन खल्वयं ज्ञाताऽर्थमुपलभ्य तमर्थमभीप्सति जिहासति वा'।**

अर्थात् ज्ञाता मनुष्य निश्चित रूप से प्रमाण के द्वारा किसी भी वस्तु को पा कर या जान कर (उस वस्तु को लाभकारी जान कर) उसे पाना चाहता है और वह वस्तु हानिकारक है, तो उसे त्यागना चाहता है।

यहाँ पर यह बात समझने योग्य है कि प्रमाण पदार्थों के यथार्थ स्वरूप को जनाते हैं। प्रमाण वस्तुओं के हानिकारक स्वरूप को और लाभकारक स्वरूप को दिखाते हैं। मनुष्य वस्तु के दोनों (हानिकारक व लाभकारक) स्वरूप को जान कर ही प्रवृत्त होता है। यदि मनुष्य को वस्तु पाने की इच्छा या त्यागने की इच्छा हो रही है, तो इसके पीछे प्रमाण कारण बनता है। मनुष्य की प्रवृत्ति अर्थात् पुरुषार्थ प्रमाण पर आधारित है। यदि मनुष्य के जीवन में से प्रमाणों को हटाया जाये, तो मनुष्य का पुरुषार्थ आधार हीन हो जायेगा। मनुष्य प्रमाण रहित हो कर जो भी कार्य करेगा उसका फल सुखदायी नहीं होगा बल्कि दु:खदायी होगा। इसलिए मानव जीवन का आधार प्रमाण है। प्रमाणों के बिना मानव जीवन कभी सफल नहीं हो सकता। मनुष्य में दो प्रकार की इच्छाएँ होती हैं। एक का नाम अभीप्सा है अर्थात् सुखदायी वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा और दूसरी का नाम है जिहासा अर्थात् दु:खदायी वस्तु को त्याग करने की इच्छा। मनुष्य इन दोनों प्रकार की इच्छाओं से युक्त रहता है। इन दोनों इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए सदा पुरुषार्थ करता रहता है।

महर्षि वात्स्यायन ने **'प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्याय:'** कहा है। यहाँ अर्थ शब्द से क्या अभिप्राय लेना चाहिए? इसका समाधान स्वयं महर्षि ने दिया है **'अर्थस्तु सुखं सुखहेतुश्च, दु:खं दु:खहेतुश्च।'** अर्थात् संसार में अर्थ शब्द से कहे जाने वाले पदार्थ चार हैं- सुख और सुख के कारण, दु:ख और दु:ख के कारण। मनुष्य संसार में जिन-जिन को सुख के रूप में देखता है उन सब को सुख में ग्रहण किया है और जिन-जिन को सुख दिलाने के कारण के रूप में देखता है उन सब को सुख के कारण में ग्रहण किया है। इसी प्रकार मनुष्य संसार में जिन-जिन को दु:ख के रूप में देखता है उन सब को दु:ख में ग्रहण किया है और जिन-जिन को दु:ख दिलाने के कारण के रूप में देखता है उन सब को दु:ख के कारण में ग्रहण किया है। इस प्रकार संसार में अनगिनत पदार्थ हैं, जो इन चार प्रकारों में आ जाते हैं। इसलिए महर्षि लिखते हैं -

'सोऽयं प्रमाणार्थोऽपरिसङ्ख्येय:'।

अर्थात् प्रमाणों से जानने योग्य पदार्थ असंख्य हैं। जिन्हें गिना नहीं जा सकता। यद्यपि संसार में असंख्य पदार्थ हैं परन्तु उन असंख्य पदार्थों को एक मनुष्य नहीं जान सकता और सब पदार्थों को जानना भी आवश्यक नहीं है। क्योंकि परमेश्वर ऐसा विधान कभी नहीं कर सकता, जिसे मनुष्य नहीं कर सकता हो। इसलिए मनुष्य के सामर्थ्य के अनुसार ही परमेश्वर ने उन पदार्थों को जानने के लिए निर्देश दिया है, जिनको जान कर मनुष्य समस्त दु:खों से छुटकारा पा कर पूर्ण आनन्द को प्राप्त कर सकता है।

मनुष्य जीवन में प्रमाणों का अत्यधिक महत्त्व है। इसलिए प्रमाणों की सार्थकता से बाकि सब की सार्थकता मानी जाती है। बाकि सब का अभिप्राय है प्रमाता, प्रमेय और प्रमिति इन तीनों की सार्थकता प्रमाणों के सार्थक होने पर निर्भर करता है। इसलिए महर्षि वात्स्यायन कहते हैं कि **'अर्थवति च प्रमाणे प्रमाता प्रमेयं प्रमितिरित्यर्थवन्ति भवन्ति'।** अर्थात् प्रमाणों की यथोचित सार्थकता (सफलता) जब हो जाती है तब प्रमाता, प्रमेय और प्रमिति की भी सफलता मानी जाती है। यदि प्रमाण, प्रमाण के रूप में सफल (सार्थक) नहीं होते हैं, तो प्रमाणों के आश्रय से चलने वाला प्रमाता प्रमाणों से जानने योग्य प्रमेय और प्रमाणों से प्रतीत होने वाली प्रमिति का कोई सफलता (सार्थकता) नहीं मानी जाती है। इसलिए मनुष्य जीवन में प्रमाणों का महत्त्व है। प्रमाणों के आश्रय से ही मनुष्य, मनुष्य कहलाता है। कोई यह कहे कि प्रमाणों का इतना महत्त्व नहीं है, तो ऐसा नहीं कह सकते क्योंकि **'अन्यतमापायेऽर्थस्यानुपपत्ते:।'** अर्थात् प्रमाणों को हटा दिया जाये, तो किसी भी अर्थ (वस्तु) की सिद्धि नहीं हो सकती। इसलिए प्रमाणों की मुख्यता है और प्रमाणों की श्रेष्ठता भी है।

आपने प्रमाण, प्रमाता, प्रमेय और प्रमिति का कथन किया है। यदि इन शब्दों का अर्थ बतला देवें तो अच्छा होगा? बिल्कुल ये चारों शब्द पारिभाषिक हैं अर्थात् न्याय शास्त्र में प्रयोग में लाये जाते हैं, इसलिए शास्त्रीय शब्द हैं। लोक में प्राय: इन शब्दों का प्रयोग नहीं करते हैं। हाँ, प्रमाण शब्द का प्रयोग अपेक्षा से किया जाता है। अस्तु। प्रमाण को प्रमाण क्यों कहते हैं? क्योंकि **'स येनऽर्थं प्रमिणोति तत्प्रमाणम्।'** अर्थात् मनुष्य जिस साधन के द्वारा अर्थ (वस्तु) को यथार्थ रूप में जानता-पहचानता-समझता है, ऐसे उस साधन को प्रमाण कहते हैं। प्रमाता को

प्रमाता क्यों कहते हैं? क्योंकि '**यस्येप्साजिहासाप्रयुक्तस्य प्रवृत्तिः स प्रमाता।**' अर्थात् जिस मनुष्य की सुखदायी वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा और दुःखदायी वस्तु को त्याग करने की इच्छा होती हो ऐसी इच्छा से प्रेरित हो कर जो प्रवृत्ति (पुरुषार्थ या उद्यम) होती है, ऐसे मनुष्य को प्रमाता कहते हैं। प्रमेय को प्रमेय क्यों कहते हैं? क्योंकि '**योऽर्थः प्रमीयते तत् प्रमेयम्।**' अर्थात् जो पदार्थ (वस्तु) जाना जाता है वह पदार्थ ही यहाँ प्रमेय कहलाता है। और प्रमिति को प्रमति इसलिए कहा जाता है कि '**यत् अर्थविज्ञानं सा प्रमितिः।**' अर्थात् जो पदार्थ (वस्तु) का यथार्थ ज्ञान (जानकारी) है, उसे ही यहाँ प्रमिति शब्द से कहा गया है। महर्षि वात्स्यायन का कथन है कि संसार में जितने भी पदार्थ हैं वे सब इन चारों में ही आ जाते हैं अर्थात् इन चारों से भिन्न और कोई भी अर्थ तत्त्व नहीं है। इसलिए कहते हैं कि '**चतसृषु चैवंविधास्वर्थतत्त्वं परिसामप्यते।**'

प्रमाणों में इतना सामर्थ्य है कि जहाँ प्रमाण यथार्थ सत्तात्मक विद्यमान पदार्थों का ज्ञान (जानकारी) कराने में समर्थ हैं वहाँ जो पदार्थ नहीं है अर्थात् जिनकी कोई सत्ता नहीं है, ऐसे अभाव का भी ज्ञान कराने में समर्थ हैं। यह कैसे सम्भव है कि जो पदार्थ है ही नहीं, जिसकी कोई सत्ता ही नहीं फिर प्रमाण अभाव का ज्ञान कैसे कराते हैं? महर्षि कहते हैं कि '**कथमुत्तरस्य प्रमाणेनोपलब्धिरिति?**' अर्थात् सत्तात्मक पदार्थ से भिन्न अभावात्मक का ज्ञान प्रमाण कैसे कराते हैं? इसका समाधान करते हुए ऋषि लिखते हैं कि '**सत्युपलभ्यमाने तदनुपलब्धेः प्रदीपवत्।**' अर्थात् जिस प्रकार वस्तुओं को दिखलाने वाला दीपक नाना प्रकार के वस्तुओं को दिखलाता है, उसी प्रकार दीपक जो वस्तुवें नहीं हैं, तो नहीं हैं- अभाव हैं के रूप में दिखलाता है। यदि वस्तुएँ होतीं तो दिखती हैं पर नहीं हैं, इसलिए नहीं दिख रही हैं इस प्रकार दीपक भाव (सत्तात्मक) और अभाव (असत्तात्मक) दोनों का ज्ञान कराता है। जिस प्रकार दीपक जनाता है उसी प्रकार प्रमाण भी करता है। दीपक को प्रमाण के स्थान पर रख कर देखा जाये, तो सरलता से समझ में आयेगा। इसीलिए प्रमाण मनुष्य के जीवन में महत्त्व रखते हैं। इस कारण प्रमाणों की जानकारी अवश्य कर लेना चाहिए।

प्रमाणों से जानने योग्य प्रमेय (पदार्थ) असंख्य हैं और सब की जानकारी करना आवश्यक भी नहीं है। इसलिए जितने प्रमेयों को जानने से मनुष्य का प्रयोजन-लक्ष्य पूर्ण हो सकता हो उतने प्रमेयों का निर्देश महर्षि गौतम मुनि ने न्याय शास्त्र में दिया है और वे प्रमेय इस प्रकार हैं-

आत्मशरीरेन्द्रियार्थबुद्धिमनः
प्रवृत्तिदोषप्रेत्यभावफलदुःखापवर्गास्तु प्रमेयम्।

(न्यायदर्शन १.१.९) अर्थात् १. आत्मा २. शरीर ३. इन्द्रियाँ ४. अर्थ ५. बुद्धि ६. मन ७. प्रवृत्ति ८. दोष ९. प्रेत्यभाव १०. फल ११. दुःख १२. अपवर्ग। इस प्रकार बारह प्रमेय हैं। जिनको जानना-समझना और अनुभव करना आवश्यक है। आत्मा सुख और दुःख को देखता है, भोगता है, जानता है और प्राप्त करता है। इसलिए आत्मा को अनिवार्य रूप से जानना चाहिए। आत्मा के भोग का जो आधार बनता है, जिसके बिना भोग नहीं हो सकता उसे शरीर कहते हैं, ऐसे शरीर को अनिवार्य रूप से जानना चाहिए। भोग कराने के जो साधन हैं, जिनके माध्यम से आत्मा भोग करता है, उन साधनों को इन्द्रियाँ कहते हैं। ऐसी इन्द्रियों का ज्ञान अनिवार्य रूप से करना चाहिए। भोगने योग्य जो विषय हैं, जिन को रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द के रूप में जाना जाता है, ये पाञ्चों विषय इन्द्रियों के अर्थ कहलाते हैं। इन विषयों को भी अच्छी प्रकार से जानना चाहिए।

जब विषयों का भोग होता है तब भोग के काल में विषयों का जो-जो अनुभव होता है, उस अनुभव को यहाँ बुद्धि शब्द से कहा गया है, यहाँ बुद्धि का अर्थ ज्ञान है। इन्द्रियाँ तो अपने-अपने विषयों को ग्रहण करती हैं अर्थात् नेत्रेन्द्रिय रूप को ग्रहण करती है पर गन्धादि को नहीं, इसी प्रकार सभी इन्द्रियाँ हैं। परन्तु मन ऐसी अन्दरूनी इन्द्रिय है, जिसे अन्तःकरण कहा जाता है, जो सभी विषयों को अपना विषय बनाता है अर्थात् सभी विषयों को ग्रहण करता है। इसलिए यहाँ सभी विषयों को ग्रहण करने वाले को मन कहा गया है। ऐसे मन को अनिवार्य रूप से जानना चाहिए। प्रवृत्ति शब्द से धर्म और अधर्म को लिया गया है। धर्म से पुण्य और अधार्म से पाप कर्म लिए जाते हैं और दोष शब्द से अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश को ग्रहण किया है। इस प्रकार धर्माधर्म रूपी प्रवृत्ति से राग-द्वेष रूपी दोषों से मनुष्य को बार-बार शरीर, इन्द्रियाँ, सुख, दुःख आदि प्राप्त होते रहते हैं। इसलिए धर्म-अधर्म व दोषों को अनिवार्य रूप से जानने की बात कही है।

प्रत्येक मनुष्य का जन्म का होना और मृत्यु का होना निरन्तर चल रहा है जन्म व मृत्यु की शृंखला अनवरत रूप से चल रही है। मरकर के पुनः जन्म लेना ही प्रेत्यभाव कहलाता है। जन्म को जानना और मृत्यु को जानना मनुष्य का कर्त्तव्य है। इसे जाने बिना मनुष्य की उत्तम गति नहीं

हो सकती। इसीलिए प्रेत्यभाव का ग्रहण किया है। संसार में जितने भी सुख और सुख के साधन हैं और जितने भी दु:ख और दु:ख के साधन हैं उनका भोग करना ही फल कहलाता है। इसलिए फल को भी अनिवार्य रूप से जानना चाहिए। कोई मनुष्य यह नहीं समझे कि सुख की अनुभूति जहाँ नहीं होती हो अर्थात् सुख का न होना ही दु:ख हो ऐसा नहीं है। संसार में जितने भी सुख हैं, उन सुखों के साथ दु:ख जुड़ा हुआ होता है, जिस दु:ख को विवेकी-तत्त्वज्ञानी ही पहचान पाते हैं। मनुष्य से दु:ख अलग नहीं हो पाता है जब तक जन्म से युक्त रहेंगे तब तक दु:ख लगा ही रहेगा। इसलिए संसार दु:ख युक्त है। इस दु:ख से छुटकारा पाने के लिए ही समाधि योग का उपदेश किया जाता है।

जन्म और मरण रूपी शृंखला का प्रवाह जो निरन्तर चल रहा है, ऐसे प्रवाह का जब उच्छेद होता है अर्थात् प्रवाह टूट जाता है और सभी दु:ख आत्मा से हट जाते हैं, जहाँ दु:ख का गन्ध मात्र नहीं होता हो, ऐसी स्थिति को अपवर्ग कहते हैं। ऐसे अपवर्ग को अनिवार्य रूप से जानना चाहिए। वैसे तो द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय आदि अनेक प्रकार के पदार्थ विद्यमान हैं और उनके अवान्तर भेद से असंख्य पदार्थ बन जाते हैं, परन्तु उन सब को जानने की आवश्यकता नहीं है। इसलिए न्याय दर्शनकार महर्षि गौतम मुनि कहते हैं कि बारह प्रकार के (आत्मा, शरीरादि) प्रमेयों का यथार्थ ठीक-ठीक तत्त्वज्ञान करके मनुष्य समस्त दु:खों से छूट कर अपवर्ग रूपी नित्यानन्द को प्राप्त कर सकता है। बारह प्रमेयों का तत्त्वज्ञान करने से अपवर्ग और इनका तत्त्वज्ञान न करने से तो मिथ्याज्ञान बना रहेगा और मिथ्याज्ञान के कारण बन्धन (जन्म) को प्राप्त करना होगा। इसलिए अपवर्ग को प्राप्त करने का उपदेश किया है।

यदि मनुष्य प्रमाणों (तर्कों) को विधिवत् अध्ययन नहीं करता, तो प्रमाणों का उचित प्रयोग नहीं कर पायेगा। न्यायशास्त्र या प्रमाण शास्त्र को तर्क शास्त्र भी कहते हैं। यद्यपि न्याय शास्त्र में प्रमाणों से पृथक् तर्क को ग्रहण किया है। पुनरपि तर्क को अनेक स्थानों में प्रमाण शब्द के पर्यायवाची के रूप में भी ग्रहण किया जाता है। प्रसंग के अनुसार तर्क शब्द प्रमाण भी होता है और तर्क प्रमाण से भिन्न भी होता है। लोक में प्राय: यह कथन करते हुए देखा जाता है कि अध्यात्म-मार्ग में तर्क मत करो, प्रत्येक विषय में तर्क करना उचित नहीं है। ऐसा कहा जाता है। परन्तु महर्षि गौतम मुनि कहते हैं कि बिना तर्क (प्रमाण) के किसी भी वस्तु का निर्णय नहीं हो सकता क्योंकि वस्तुओं की परीक्षा प्रमाणों से ही होती है। इसलिए अध्यात्म-मार्ग में चलने वाले प्रत्येक साधक को चाहिए कि वह प्रमाणों का आश्रय लें, जिससे अध्यात्म-मार्ग प्रशस्त हो सके। प्रमाणों को अपनाये बिना अध्यात्म-मार्ग में प्रगति नहीं हो सकती है। इसलिए साधक तर्क (प्रमाण) से न डरें बल्कि तर्क को उपाय के रूप में ग्रहण करें।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

पृष्ठ संख्या ५ का शेष भाग

आज आर्यसमाज की संस्थाओं द्वारा पैसा कमाया जा सकता है सुख-सुविधायें जुटाई जा सकती हैं परन्तु धर्म का प्रचार-प्रसार नहीं किया जा सकता। आज कितने भी विद्यालय, महाविद्यालय, छात्रावास खोले गये हैं, वे धर्म प्रचारक तैयार नहीं कर सकते, धर्म प्रचारक बनाने के लिए गुरुकुल, उपदेशक-विद्यालय और आश्रमों की आवश्यकता है जहाँ से विद्वानों और कार्यकर्त्ताओं का निर्माण किया जाये, उनके बिना प्रचार-प्रसार का कार्य किया नहीं जा सकता। आज विद्वानों का अभाव है, विद्वान् संन्यासियों का भी अभाव है। क्योंकि इनको बनाने वाली संस्थानों को हमने कॉलेजों के लोभ में समाप्त कर दिया है, हमें उन्हें जीवित करना होगा, यही समाज के जीवित रहने का उपाय है।

संसद के केन्द्रीय कक्ष में नरेन्द्र मोदी ने एक बात कही थी, आर्यसमाज को यह बात गांठ बांध लेनी चाहिए, मोदी ने अपने कार्यकर्त्ताओं का धन्यवाद करते हुए उन्हें स्मरण कराया था और कहा था- संघ के कार्यकर्त्ताओं की पाँच पीढ़ियाँ कश्मीर से केरल तक काम करने में खपी हैं, बहुतों ने अपना बलिदान दिया है। हजारों ने अपना जीवन दिया है तब यह दिन देखने में आया है। यह सच समझे बिना कोई संगठन नहीं चल सकता। जो करने का साहस रखते हैं उन्हें ही जीवन का अवसर मिलता है। जीवित रहना है तो विचार को जीवित रखना होगा। मोदी आपकी सहायता कर सकते हैं, मोदी ऋषिभक्त हैं, ऋषि दयानन्द के विचारों को प्रांसगिक मानते हैं। परन्तु विचारों के साथ जीने-मरने की शपथ तो हमें लेनी होगी तभी मोदी की शपथ हमारे लिए लाभदायक और सार्थक होगी। हमें उठना होगा, जागना होगा यही विकल्प है। ठीक कहा है-

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति
न चेदिहावेदीन्महती विनष्टि:।

संभलो, समझो नहीं तो नाश निश्चित है।

- धर्मवीर

कुछ तड़प-कुछ झड़प

- राजेन्द्र जिज्ञासु

पिछले अंक का शेष भाग.....

उड़िया भाषा में सत्यार्थप्रकाशः- श्री स्वामी सुधानन्द जी ने उड़िया भाषा में सत्यार्थप्रकाश के अनुवाद के प्रकाशन के कार्य को आगे बढ़ाते हुए कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण चर्चा करते हुए कुछ आवश्यक जानकारी माँगी। उनके एक प्रश्न का उत्तर देते हुए मैंने उन्हें कहा कि चौदहवें समुल्लास पर कुछ भी लिखते हुए अथवा टिप्पणी देते हुए तीन चार ग्रन्थों को ध्यानपूर्वक पढ़कर ही कुछ लिखें। स्वामी वेदानन्द जी द्वारा सम्पादित सत्यार्थप्रकाश, श्री पं. चमूपति कृत चौदहवीं का चाँद तथा कुरान सत्यार्थप्रकाश के आलोक में, अन्तिम ग्रन्थ इन पंक्तियों के लेखक द्वारा लिखित है। आर्यजन इन तीनों के महत्त्व की भली भाँति समझ लें।

कभी कुछ मित्रों ने पं. रतिराम नाम के एक सज्जन को उसकी एक कृति के लिए सम्मानित करते हुए शॉल ओढ़ाया था। रतिराम जी ने अपनी पुस्तक में स्वामी वेदानन्द जी, आचार्य उदयवीर जी तथा पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक के लिए बड़ी अभद्र भाषा का प्रयोग किया था। स्वामी वेदानन्द जी के परिश्रम का मूल्याङ्कन करते हुए पूज्य उपाध्याय जी ने लिखा था कि ऐसा ग्रन्थ तो साठ वर्ष पूर्व छप जाना चाहिये था और देहलवी जी ने लिखा था, **'ईं कार अज़ तो आयद व मर्दीं चुनीं कुनन्द'** अर्थात् यह कार्य जो आपने किया है, वीर पुरुष ऐसे ही किया करते हैं।

पं. चमूपति जी का उक्त ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के दार्शनिक सिद्धान्तों के मण्डन तथा मुसलमानों की आपत्तियों का मौलिक उत्तर है। तीसरा ग्रन्थ चौदहवें समुल्लास के व्यापक व गहरे प्रभाव तथा मुसलमानों के आक्षेपों के उत्तर में लिखा गया नवीनतम खोजपूर्ण उत्तर है। सत्यार्थ प्रकाश के इस्लाम पर गहरे प्रभाव के इस्लामी ग्रन्थों के जितने प्रमाण इसमें हैं और किसी भी ग्रन्थ में नहीं मिलेंगे।

रही बात आयतों के पाठ व अर्थों के मिलान की बात सो उक्त तीन ग्रन्थों के अतिरिक्त समय-समय पर श्री राजवीर जी तथा इस लेखक से सम्पर्क करते रहिये। सब आवश्यक और प्रामाणिक जानकारी हम देंगे।

पाकिस्तान से एक प्रेमी आयाः- पाकिस्तान से एक सत्यान्वेषी मुसलमान बन्धु मुझे मिलने दिल्ली पहुँचा। मैंने उसे पुस्तक मेले पर दर्शन देने के लिए परोपकारिणी सभा तथा गोविन्दराम हासानन्द के स्टॉल के नम्बर व पते दिये। दिल्ली की भीड़ भाड़, जाम लगने व ऋतु की गड़बड़ के कारण हमारा उनसे मेल मिलाप न हो पाया। श्रीयुत् डॉ. अशोक जी तथा यह लेखक उनसे धर्म चर्चा के लिए उस भाई से भी कहीं अधिक उत्सुक थे। सत्यार्थप्रकाश, कुल्लियाते आर्य मुसाफिर को पढ़कर वह सज्जन बहुत प्रभावित थे। पं. लेखराम जी, पं. चमूपति जी के बारे में विशेष जानकारी मुझसे प्राप्त करना चाहते थे। हम आर्यों से कहेंगे-

बड़े शौक से सुन रहा है जमाना,
तुम्हीं मर गये दास्ताँ कहते कहते।

आर्यो! सोचो आपमें से पं. लेखराम जी व पं. चमूपति दर्शन के कितने अधिकारी विद्वान्, लेखक व वक्ता हैं? हमने पाकिस्तान से छपी अनेक पुस्तकों में पं. लेखराम तथा आचार्य चमूपति की लौह लेखनी के दर्शन किये। जिन्हें इस्लाम में सत्यार्थप्रकाश तथा ऋषि दर्शन की गूञ्ज सुनने की चाहना है वह हमारी अगली पुस्तक के प्रकाशन की प्रतीक्षा करें। प्यारे ऋषि का एक मस्ताना युवक इसे प्रकाशित करने का दायित्व ले चुका है।

उपाध्याय जी के दयानन्द-दर्शन का हिन्दी अनुवादः- संस्थावादी, स्कूलवादी नामधारी आर्यसमाजियों की धर्मधाती नीतियों को देश-विदेश में एक सुधारक तथा कुछ देशभक्त के रूप में ही जाना जाता है। ऋषि दयानन्द योगी थे, ऋषि थे तथा वेदवेत्ता महान् ऋषि व दार्शनिक थे, संसार को हम यह बता पाने में विफल रहे।

स्वामी सत्यप्रकाश जी तथा उपाध्याय जी ने अंग्रेजी में दयानन्द दर्शन पर एक-एक मौलिक ग्रन्थ लिखा। दोनों अपने-अपने ढंग के बेजोड़ ग्रन्थ हैं। मेरे अनुरोध और विनीत विनती पर श्री डॉ. रूपचन्द जी ने इन दोनों का हिन्दी अनुवाद करके अपना जीवन सफल कर लिया है। पहली पुस्तक का प्रकाशन गोविन्दराम हासानन्द कर चुका है। अब उपाध्याय जी के ग्रन्थ का अनुवाद भी अजय जी प्रेस में दे चुके हैं। इस करणीय कार्य के करने पर अनुवादक प्रकाशक के साथ मैं आर्यजगत् को भी बहुत-बहुत बधाई देता हूँ। इन दोनों ग्रन्थों के प्रचार-प्रसार में आर्यसमाजें पूरी शक्ति से लगेंगी तो ऋषि का बोलबाला होगा। समाज को यश मिलेगा। उपाध्याय जी के इसी ग्रन्थ को पढ़कर एक रूसी विद्वान् ने पहली बार ही ऋषि के वैदिक दर्शन पर

यथार्थ लिखा। कुछ भी भ्रामक नहीं लिखा। दर्शनप्रेमी विद्वानों को पूरे भारत में इस ग्रन्थ की एक-एक प्रति पहुँचाने का उद्योग कीजिये।

इतिहास की कुञ्जी:- श्री पं. भगवद्दत्त जी ने एक बार सीख देते हुए इस लेखक को कहा था कि विद्या वही जो कण्ठाग्र हो। किसी भी विषय तथा किसी भी शास्त्र पर अधिकार पाने के लिये यह नियम कार्य करता है परन्तु इतिहास शास्त्र पर पकड़ बनाने के लिये तो यह अपरित्याज्य नियम है। गत दिनों कुछ लेखों व पुस्तकों पर प्रश्न चिह्न लगाते हुए कुछ बन्धुओं ने मुझसे चर्चा करते हुए मेरा मत जानना चाहा। मैंने कहा कि मिलान, चिन्तन तथा स्मृति- ये इतिहास शास्त्र की कुञ्जी हैं। इन तीनों को न भी सही परन्तु प्रमाणों का तथ्यों का मिलान तो परमावश्यक है। स्मृति प्रत्येक व्यक्ति की विश्वसनीय नहीं हो सकती। प्रमाणों की जाँच तथा मिलान पर तो मैं बार-बार लिखता चला आ रहा हूँ।

श्री डॉ. अशोक आर्य जी ने एक लेख में श्री कन्हैयालाल अलखधारी जी को आर्यसमाजी लिख दिया। श्री भावेश मेरजा जी ने उन्हें बताया कि अलखधारी जी ऋषि को आमन्त्रित करके पंजाब बुलाने वालों में से थे। ऋषि जी के समर्थक थे परन्तु आर्यसमाजी नहीं थे। अशोक जी ने पूज्य पं. देवप्रकाश जी की एक पुस्तक पढ़कर लेख लिख दिया। पं. देवप्रकाश जी की वह पुस्तक कुछ उपयोगी तो है परन्तु इतिहास की दृष्टि से विश्वसनीय नहीं। मैंने कभी भी किसी को उसका सुझाव नहीं दिया। सब कुछ स्मृति के आधार पर और सुन सुनाकर आपने लिखा है। हमारे लोग अब लेखों व पुस्तकों में अपने स्रोत का उल्लेख ही नहीं करते। सी.एफ. एण्ड्रयूज़ या रोमाँ रोलाँ का नाम लेना नहीं भूलते। स्रोत का लाभ उठाकर उसका नामोल्लेख करने से लेखक का गौरव तथा लेख की प्रामाणिकता बढ़ जाती है।

बिजनौर के एक स्वाध्यायशील युवक ने कहीं से डी.ए.वी. के शहीदों की रट विशेषकर कन्हाईलाल जी दत्त को डी.ए.वी. से जोड़ने के बारे प्रश्न पूछा तो मैंने कहा कि मैं इस स्तर के गवेषकों लेखकों को पढ़ता ही नहीं तो उत्तर क्या दूँ। बहुत जोर देकर पूछा तो उन्हें एक पुरानी बात सुनाई। कभी मुसलमानों ने सर सैय्यद अहमद खाँ की कुरान की तफ़सीर पर यह लिखा था कि आयतों के जो अर्थ अल्लाह व रसूल को भी न सूझे वे सर सैय्यद को सूझ गये। ठीक यही बात डी.ए.वी. के उस वक्ता व चाकर की समझें जिसके मुख से आपने डी.ए.वी. के शहीदों व वीर कन्हाईलाल विषयक गढ़न्त सुनी है।

महात्मा हंसराज, लाला दीवानचन्द, श्रीराम शर्मा, मेहरचन्द महाजन, लाला साईंदास को जो न सूझा वह सब कुछ इन चाकर वक्ताओं से सुन लें। डी.ए.वी. कॉलेज की अर्ध शताब्दी मनाई गई। उसका वृत्तान्त छपा मैंने पढ़ा था। उसमें किसी शहीद को किसी ने याद ही नहीं किया था। तब कई क्रान्तिकारी (जिनके नाम उसने बताये) जीवित थे और लाहौर में ही रहते थे। उनमें से समारोह में कोई भी उपस्थित या आमन्त्रित नहीं था। सरकार भक्त सर आनन्द स्वरूप अवश्य एक मुख्य वक्ता के रूप में वहाँ पधारे थे।

लाला लाजपतराय जी, भाई परमानन्द जी आदि के ग्रन्थों में तो इन नई हदीसों के सर्वथा विपरीत सामग्री है। भाई परमानन्द जी की पुस्तक 'आप बीती' इस समय मेरे सामने है। इसके पृष्ठ ५५ पर अन्तिम वाक्य है, 'हम गवर्नमेन्ट के साथ रहेंगे। **अभियोग आरम्भ होने से पहले ही मुझे पदच्युत कर दिया गया।**' श्री राम शर्मा ने दिल्ली विश्वविद्यालय में अपने एक अंग्रेजी में दिये भाषण में राजनैतिक झांकी देते हुए डी.ए.वी. के किसी शहीद को संकेत तक नहीं दिया। डी.ए.वी. ने कभी किसी देशभक्त का, किसी क्रान्तिकारी का, किसी शहीद का केस लड़ा हो तो प्रमाण दें। किसी के फांसी चढ़ने पर श्रद्धाञ्जलि दी क्या? अपने पत्र आर्यगज़ट में किसी क्रान्तिकारी का चित्र छापा क्या? सन् १९२०-२१ तक तो उसमें शहीद शिरोमणि पं. लेखराम का भी फोटो नहीं छपा। सरकार ने आज्ञा दी तो मार्शल लॉ के समय एक दर्जन से ऊपर सर्वथा निर्दोष छात्र कॉलेज से निकाल दिये। दयालसिंह कॉलेज को भी यही आज्ञा दी गई। उन्होंने एक भी छात्र को कॉलेज से न निकाला। इस कलंक का प्रमाण चाहिये तो श्री रामचन्द्र आर्य सोनीपत से ले लें।

हमारे लिखने का प्रयोजन बस इतना ही है कि हदीसें गढ़ते रहोगे तो आपके पाप का फल आर्यसमाज को चखना पड़ेगा। आर्यसमाज का उपहास उड़ाया जावेगा। पूज्य पं. भगवद्दत्त फकीर को अंग्रेज ने खरीदना चाहा। वह तो न बिके और आपने उन्हें अपमानित कर दिया। इतिहास से प्रेम है तो चिन्तन, मिलान तथा स्मृति की चाबी से काम लेकर तथ्यपूर्ण लिखा करो।

वेद सदन, अबोहर-१५२११६ (पंजाब)

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर (प्राथमिक स्तर)

दिनांक : १२ से १९ अक्टूबर, २०१४

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति उपलब्ध नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों–बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे। साथ ही पढ़ाये गये विषयों की लिखित परीक्षा व आपके द्वारा पालन किये गये शिविर के अनुशासन का भी आकलन किया जायेगा, इसी आधार पर प्रमाण–पत्र भी दिये जायेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ना होगा।
३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
७. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
८. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
९. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने–ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल

कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जाता है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक खाता संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

IFSC - IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या -10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।

IFSC - SBIN0007959

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१२ से १९ अक्टूबर, २०१४- **योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर),**
सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

ऋषि मेला - ३१ अक्टूबर तथा १, २ नवम्बर २०१४

ध्यान प्रशिक्षण योजना

ध्यान का महत्त्व सदा से रहा है। आज के तनाव व प्रतिस्पर्धा के वातावरण में यह अधिक आवश्यक हो गया है। नई पीढ़ी यज्ञादि कर्मकाण्ड की अपेक्षा–ध्यान में अधिक रुचि व आकर्षण रखने लगी है। प्रौढ़ों व वृद्धों की आध्यात्मिक उन्नति की चाह ध्यान के माध्यम से पूरी हो सकती है। समाज सुधार व उन्नति के इच्छुक व इसमें प्रयत्नशील आर्यों को ध्यान प्रशिक्षण का उपाय सार्थक लगेगा। ऐसी इच्छा वाले सज्जन अपने यहाँ किसी भी आर्यसमाज, आर्य संस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, गुरुकुल, सार्वजनिक स्थान आदि में 'ध्यान–प्रशिक्षण' करवाना चाहते हों, तो कृपया अपने व कार्यक्रम–स्थान, समय आदि की पूरी सूचना के साथ सम्पर्क करें।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षित अनेक ध्यान–प्रशिक्षक इस कार्य में सेवा के लिए तैयार हैं। ये ध्यान–प्रशिक्षक आपके जनपद के निकट भी उपलब्ध हो सकते हैं। आयोजकों को कार्यक्रम हेतु स्थान, बैठक–व्यवस्था, आवश्यक हो तो माईक आदि की व्यवस्था, प्रशिक्षक के निवास, भोजन, आवागमन यात्रा आदि की व्यवस्था करनी होगी।

सम्पर्क–संयोजक, ध्यान प्रशिक्षण योजना, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, ३०५००१, दूरभाष–०१४५–२४६०१६४, ईमेल–psabhaa@gmail.com

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम – परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक खाता संख्या–091104000057530 बैंक का नाम–आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC – IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या –10158172715 बैंक का नाम – भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC – SBIN0007959

।। ओ३म् ।।

अलग-अलग स्तरों में योग-साधना शिविर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि-उद्यान, अजमेर में वर्षों से अब तक योग्य आचार्यों द्वारा योग-साधकों का निर्माण करने के लिए वर्ष में दो बार योग से सम्बन्धित व ध्यान से सम्बन्धित शिविरों का आयोजन किया जाता रहा है और साधकों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास किया जाता रहा है। समाज में और अधिक योग्य व आदर्श साधकों की आवश्यकता अनुभव करते हुए इस वर्ष जून मास के शिविर में नवीन पाठ्यक्रम की विधि अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) के दो शिविर लगाये जा चुके हैं। यह शिविर ध्यान से सम्बन्धित, ईश्वर-जीव-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जानने से सम्बन्धित, योगदर्शन व सांख्यदर्शन के कुछ प्रमुख विषयों के सूत्रों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर योगदर्शन व सांख्यदर्शन को जानने-समझने से सम्बन्धित, आत्मनिरीक्षण में कुछ नये विषयों को सूक्ष्मता से समझने से सम्बन्धित, दिनचर्या को अनुशासित व सात्त्विक बनाने से सम्बन्धित तथा विभिन्न सैद्धान्तिक व व्यावहारिक विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित प्रारम्भिक स्तर के योग के इच्छुक साधकों के लिए लगाया गया। इस योग-साधना शिविर को आगामी वर्षों में चतुर्थ स्तर तक लगाने की योजना बनाई गई है। प्रारम्भिक स्तर से लेकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्तर तक के शिविरों में पूर्व सूचित पाठ्यक्रमित विषयों में अधिक से अधिक सूक्ष्मता, दिनचर्या में और अधिक अनुशासन व सात्त्विकता, आहार-शुद्धि से लेकर मन, आत्मा की शुद्धि पर्यन्त अनुभवात्मक स्तर पर योग-साधकों को ज्ञान करवाया जाएगा। प्रत्येक स्तर के साधकों को उनके सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से सम्बन्धित तथा उनके व्यक्तिगत आचरण व अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए परीक्षा-पद्धति के माध्यम से प्रथम-श्रेणी व उच्च प्रथम-श्रेणी के प्रमाण-पत्र दिए जायेंगे। इस प्रकार की विधि से योग्य साधकों को समाज में सम्मान मिलेगा तथा वे और अधिक उत्साह से समाज व देश के कल्याण के लिए कार्यरत होंगे, उन्हें देखकर अन्य साधक भी प्रेरित होंगे।

परोपकारिणी सभा व गुरुकुल ऋषि उद्यान के योग्य आचार्यों व संयोजकों द्वारा नवनिर्मित इस योजना के प्राथमिक स्तर में पर्याप्त उपलब्धि हुई है। भविष्य में इस योजना में आप सब के सहयोग की आवश्यकता है।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

अमर शहीद कुं. प्रताप

- फतहसिंह मानव

अमर-शहीद कुँ. प्रताप का जन्म, उदयपुर में, इतिहास-पुरुष कविराजा श्यामलदास जी दधिवाड़िया की हवेली में दिनांक २४ मई, सन् १८९३ को हुआ था। इस सम्बन्ध में कुँ. प्रताप के पितामह, राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासकार, साहित्यकार एवं राजनीतिज्ञ श्री कृष्णसिंह जी बारहठ, शाहपुरा ने अपने प्रसिद्ध इतिहास ''कृष्णसिंह बारहठ का जीवन-चरित्र और राजपूताना का अपूर्व, इतिहास'' के खण्ड द्वितीय के पृ.सं. २७३ पर कुँ. प्रताप के जन्म का विवरण, इस प्रकार दिया है:-

ग्रन्थकर्ता बारहठ कृष्णसिंह के पौत्र का जन्म:-

''विक्रमी संवत् १९५० ज्येष्ठ सुदी नवमी, तदनुसार दिनांक २४ मई, सन् १८९३ को एक घड़ी रात गये मेरे बड़े पुत्र केसरी सिंह के पुत्र का जन्म हुआ। इस बात की मुझे बहुत खुशी हुई और सबसे ज्यादा खुशी मेरी माता को हुई क्योंकि केसरीसिंह की माता, उसको एक महीना का छोड़ कर मर गयी थीं, जिसका पालन-पोषण मेरी माता ने किया था। इस सबब से उनका इस पर अधिक स्नेह है और मेरी माता के सामने इस प्रपौत्र के जन्म से तीन पीढ़ी विद्यमान हैं। इसकी लौकिक में भी बड़ी खुशी मानी जाती है।''

इस प्रकार, हम देखते हैं कि प्रताप का जन्म बहुत ही सम्मान-जनक परिस्थितियों में हुआ था । उसके पितामह स्वनाम-धन्य श्री कृष्णसिंह जी बारहठ को राजस्थान के सभी नरेशों द्वारा बहुत सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। वे, महाराणा साहिब सज्जनसिंह जी एवं महाराणा साहिब फतहसिंह जी उदयपुर के बड़े ही विश्वास-पात्र थे। जोधपुर के महाराजा राज-राजेश्वर जसवन्तसिंह जी साहिब भी उन पर अत्यन्त प्रसन्न थे। उन्होंने तो श्री कृष्णसिंह जी को पीढ़ियों-पर्यन्त पाँवों में स्वर्णाभूषण पहिनने की इज्जत बक्षीस की थी, जो उस जमाने में बड़े सम्मान की बात थी।।

प्रताप का विद्याध्ययन, क्राँतिकारी श्री अर्जुनलाल सेठी के प्रसिद्ध ''वर्द्धमान-विद्यालय'' अजमेर में प्रारम्भ हुआ और बाद में उन्हें अजमेर के ही दयानन्द-एंग्लो हाईस्कूल में भर्ती कराया गया था। शिक्षा प्राप्त कर, कुँ. प्रताप कोई सरकारी उच्च -पद प्राप्त नहीं करना चाहता था अपितु वह तो अपने पिता श्री क्राँतिकारी ठाकुर केसरीसिंह जी के पद-चिह्नों पर चल कर मातृ-भूमि की पराधीनता की बेड़ियाँ काटना चाहता था। कुँ. प्रताप के छोटे चाचा क्राँतिवीर जोरावरसिंह जी और प्रताप को दिनांक २३ दिसम्बर, सन् १९१२ को वाइसरॉय लॉर्ड हार्डिंज की ''फस्ट स्टेट एन्ट्री'' (प्रथम राजकीय-प्रविष्ठि पर) चाँदनी चौक, नई दिल्ली में बम-प्रहार करने की जिम्मेवारी सौंपी गयी थी परन्तु कुँ. प्रताप कद के कुछ ठिंगने थे, जब कि जोरावरसिंह जी का कद छह फीट था एवं वे शरीर से भी बड़े बलिष्ठ थे इसलिए वाइसरॉय पर बम-प्रहार उन्होंने ही किया था। प्रताप की माताश्री माणिक कँवर जी, कोटा रियासत के ठिकाना कोटड़ी के कविराजा श्री करनीदान जी की छोटी सहोदरी थी। कुँ. प्रताप के पिता श्री केसरीसिंह जी, संस्कृत, हिन्दी, मराठी, गुजराती एवं बङ्गला-भाषा के विद्वान् एवं राजस्थान के एक उदीयमान-नक्षत्र थे। अँगरेजी भाषा में एक कहावत है "Born with a silver-spoon in his mouth कुँअर प्रताप का जन्म उदयपुर के एक बडे ही सम्पन्न और विद्वान् परिवार में हुआ था। वे जन्म से ही अमीर थे। शिशु कुं. प्रताप को मुँह का Silver Spoon शाहपुरा के ''श्री केसरीसिंह बारहठ स्वतन्त्रता-संग्राम संग्रहालय'' मे प्रदर्शित है।

प्रताप के चाचा, श्री जोरावरसिंह जी ने लॉर्ड हार्डिंज पर राजधानी दिल्ली में दिनांक २३ दिसम्बर सन् १९१२, को प्रसिद्ध चॉदनी-चौक में ''पंजाब नेशनल बैंक'' की प्रथम मंजिल से बुर्का ओढ़ कर महिलाओं के बीच में बैठ कर बम-प्रहार किया था। लेकिन, जैसे ही वाइसरॉय की सवारी का हाथी उसके सामने आया, निकट बैठी हुई किसी महिला के हाथ का टल्ला श्री जोरावरसिंह के हाथ को लग गया, जिससे उसका निशान थोड़ा-सा चूक गया लेकिन वाइसरॉय के हाथी के हौदे के पीछे स्वर्ण-छत्र लिए खड़ा, रामपुर रियासत (उत्तर-प्रदेश) का जमादार, वही हाथी पर ही ढेर हो गया, वाइसरीन लेडी हार्डिंज के भी एक दो छर्रे लगे परन्तु वाइसरॉय लॉर्ड हार्डिंज बाल-बाल बच गये। बम का धमाका इतना जोर से हुआ कि चाँदनी-चौक से साढ़े तीन किलोमीटर दूर, जामा-मस्जिद तक अच्छी तरह सुना गया। यह घटना अब भारतीय इतिहास का अंग बन चुकी है। क्राँतिवीर जोरावरसिंह जी बारहठ ने , जो महती भूमिका निभाई उसके समाचार, जब अखबारों में दूसरे दिन प्रात: काल, पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय ने लाहौर में पढ़े तो उन्होंने अपने विचार इन शब्दों में व्यक्त किए

''जिस किसी भारतीय-वीर ने वाइसरॉय हार्डिंज पर बम-प्रहार किया है, उसकी वीरता की कोई सानी नहीं है, जिसने ग्रेट ब्रिटेन, जैसी एक-मात्र विश्व-शक्ति, जिसके साम्राज्य में कभी सूर्य अस्त नहीं होता, उसे सक्षम चुनौती दी है।'' वाइसरॉय पर बम प्रहार की घटना के समाचार, जब अमेरीका के अखबारों में प्रकाशित हुए तो वहाँ के भारतीयों ने खुशी के मारे मिठाइयाँ बाँटी। इस एक ही महान् घटना ने भारत-वासियों का मनो-बल, मानो एक-दम बाँसों ऊँचा उछाल दिया था।

मार्च सन् १९१४ में कुँ. प्रताप के पिता श्री केसरीसिंह जी एवं दो अन्य सह-बन्दियों पर कोटा की स्पेशल कोर्ट में कत्ल (Act 302 I.P.C.) एवं राज-द्रोह (Sedition) का संगीन मुकदमा चला था, जिसके Investigationg Officer, Mr. Armstrong, I.P.- Inspector General of Police, इन्दौर राज्य थे। यह मुकदमा अपने आप में ऐतिहासिक था। ब्रिटिश शासन-काल में इसके पूर्व किसी भी भारतीय नागरिक पर ऐसा संगीन मुकदमा अभी तक नहीं चला था। तीन महिने के प्रतिदिन के ट्रायल के पश्चात् बन्दी केसरीसिंह जी बारहठ को बीस वर्ष का सश्रम आजन्म-कारावास एवं कालापानी (Andmans) की सजा हुई थी। लेकिन उन्हें कालापानी इसलिए नहीं भेजा जा सका क्योंकि उस समय श्री केसरीसिंह जी की उम्र ४१ वर्ष की हो चुकी थी और कालापानी का जलवायु इतना Malarial एवं प्रदूषित था कि, वहाँ पहुँचने के बाद, बन्दी की शीघ्र ही मृत्यु हो जाती थी। अत: बन्दी केसरीसिंह जी को भारत की सबसे बदनाम ''हजारी बाग सैंट्रल-जेल'' बिहार प्रान्त भेजा गया और वहाँ उन्हें काल-कोठरी (Solitary-Cell) में बन्द रखा गया। बन्दी केसरीसिंह जी के दो अन्य सह बन्दी, श्री शान्तभानु लहरी (फिरोजाबाद, यू.पी. निवासी) और जोधपुर के पुष्करणा ब्राह्मण श्री रामकरण को कालापानी भेजा गया था।

ठाकुर केसरीसिंह जी को बीस साल का आजन्म कारावास होने के पश्चात्, उनकी सह-धर्मिणी श्रीमती माणिक कँवर जी, नितान्त असहाय अवस्था में, छोटे-छोटे तीन बच्चों को लेकर अपने पितृगृह, कोटा रियासत के ठिकाना कोटड़ी, बड़े भ्राता श्री करनीदान जी कविराजा साहब के यहाँ चली गयीं। अपने इधर, एक कहावत प्रसिद्ध है कि बेटी या तो आपके घर या फिर बाप के घर। इस प्रकार, प्रताप की माताश्री माणिक कँवर जी अपने पीहर में दारुण दु:ख के दिन काटने लगीं। इस समय कुँ. प्रताप की आयु, मात्र अठारह वर्ष की थी।

इसी समय एक दिन प्रताप, अपने पिताश्री के मित्र के घर पर गया और उनसे बोला ''बाबू साहब। अब मैंने सोच लिया है कि शादी कर ही लूँ'' इस पर उन सज्जन ने आश्चर्य एवं वेदना से कहा ''प्रताप। क्या तुम पागल हो गये हो? तुम्हारे पिताश्री को आजन्म बीस वर्ष का कारावास हो चुका है। क्या पता, वे जिन्दा वापस घर लौट भी सकेंगे अथवा नहीं? तुम्हारे घर-वालों को सर छिपाने की भी जगह नहीं है और इस दु:ख की घड़ी में तुम्हें शादी करने की सूझी है?'' इस पर प्रताप ने फिर कहा, ''नहीं, अब शादी जल्दी कर ही लेनी चाहिए'' और फिर विनोद-पूर्वक बोला ''मेरी शादी तो फाँसी के तख्ते पर होगी, मेरी बारात में कौन चलेगा?'' थोड़ा विचारने की बात है कि शादी और फाँसी के तख्ते का आपस में क्या सम्बन्ध है? परन्तु प्रताप तो अपने प्राण, मातृ-भूमि को अँग्रेजों की दासता से मुक्त कराने के लिए बलिदान करने हेतु, बावला हो रहा था। प्रताप तो फाँसी के तख्ते को भी शादी के मण्डप के समान माँगलिक मानता था। धन्य है, मातृ-भूमि के ऐसे वीर सपूत को।।

अपने पिताश्री के मित्र के घर पर इस प्रकार विनोद-पूर्वक वार्तालाप करने के बाद प्रताप, अपनी मातुश्री माणिक कँवर जी के पास गया और बोला ''भाभा मेरी धोती फट गयी है इसलिए दो रुपये दो।'' इस समय, श्रीमती माणिक कँवर जी की बड़ी ही विषम स्थिति थी। वे, कहाँ से दो रुपये लातीं? लेकिन किसी से माँग-ताँग कर, उन्होंने अपने पुत्र को दो रुपये दिये और उनका लाडला पुत्र, फिर तो ऐसा गायब हुआ कि वह कभी घर लौट कर वापस आया ही नहीं। धोती लेने का तो बहाना-मात्र था- प्रताप को तो रेलवे के टिकिट के लिए दो रुपये चाहिए थे।

प्रताप की माता को आजन्म इस बात का पश्चात्ताप ही रहा कि प्रताप ने मुझ से सच्ची बात छिपायी ही क्यों? यदि वह, सही बात कह कर जाता तो, मैं उसके ललाट पर कुंकुम् का तिलक लगा, उसके सर का चुम्बन लेकर और आशीर्वाद देकर विदा करती। परन्तु नियति को यह मंजूर नहीं था।।

इस क्रम को आगे बढ़ाने के पूर्व, कुँ. प्रताप के जीवन के एक महत्त्व-पूर्ण तथ्य का उल्लेख करना आवश्यक है। वह कहता था कि उसका कोई फोटोग्राफ नहीं होना चाहिए क्योंकि फोटोग्राफ उपलब्ध होने के सूरत में, पुलिस

को पहचानने में सुविधा रहती है। कुँ. प्रताप की उपरोक्त भावाभिव्यक्ति से यह बात स्पष्ट होती है कि उसने युवावस्था में प्रवेश करते ही यह दृढ़-संकल्प ठान लिया था कि एक दिन उसे मातृ-भूमि के ''स्वतन्त्रता संग्राम'' में कूदना है एवं यही उसके जीवन का परम-लक्ष्य है। उसकी अन्य आकांक्षा तो कोई थी ही नहीं। प्रताप का एक-मात्र यही फोटोग्राफ है, जिसमें वह कम्बल ओढ़े हुए एवं साफा बाँधे बैठा है। यह फोटोग्राफ, उनकी बड़ी बहिन श्रीमती चन्द्रमणि देवी के विवाहोत्सव पर, सन् १९१२ में शाहपुरा की पुश्तैनी-हवेली के Joint Family Photograph से लिया गया है। इस समय, प्रताप को बुखार था, इसलिए वह कम्बल ओढ़े हुए बैठा है। यदि यह फोटोग्राफ न होता तो आज उसके स्वरूप की केवल कल्पना मात्र ही की जा सकती थी।

कुँ. प्रताप के सम्बन्ध में खरवा अजमेर-मेरवाड़ा के राव साहिब श्री गोपाल सिंह जी जो, क्राँतिकारी एवं प्रताप के पितु:श्री केसरीसिंह जी के परम मित्र थे, कहा करते थे ''भगवान् ने सौ रंघड़ यानी वीर राजपूतों को भाँग कर, एक प्रताप को घड़ा है।'' श्रद्धेय राव साहिब गोपालसिंह जी के उपरोक्त कथन को प्रताप ने शत-प्रतिशत रूप से सत्य करके दिखा दिया, जिसे अग्रिम पंक्तियों में वर्णित किया जायेगा।

कुँ. प्रताप, अपनी मातु:श्री से दो रुपये लेकर सीधे हैदराबाद, सिन्ध पहुँचा और वहाँ एक प्राइवेट डिस्पेन्सरी में काम करने लगा एवं, जो युवक वहाँ आते, उन्हें क्राँति का पाठ पढ़ाता था। कुँ. प्रताप को ढूँढने के लिए उन्हीं की पार्टी के श्री रामनारायण चौधरी, जो बीकानेर के एक सम्भ्रान्त वैश्य-परिवार से थे, हैदराबाद पहुँचे और प्रताप को वापस राजपूताना ले आये। हैदराबाद (सिन्ध) से जोधपुर का सफर बहुत लम्बा था और प्रताप थक भी गया था इसलिए उसने सोचा कि जोधपुर से दो स्टेशन आगे, ''आसा-रा-नाडा'' के स्टेशन पर आराम कर लिया जाय क्योंकि वहाँ का स्टेशन-मास्टर, प्रताप का मित्र था। प्रताप, रात्रि में उसके क्वार्टर में रुक गया। उधर, उस स्टेशन-मास्टर के पीछे जोधपुर की पुलिस काफी अर्से से पड़ी हुई थी क्योंकि इसी स्टेशन से कुछ समय पूर्व, दो Revolvers की पार्सल, यूनाइटेट प्रोविन्सेज वर्तमान उत्तर-प्रदेश भेजी गयी थी। अत: स्टेशन मास्टर को यह एक अच्छा मौका हाथ आ गया और उसने प्रताप को अपने क्वार्टर में सुला दिया एवं उसी समय, तार द्वारा जोधपुर पुलिस को इत्तिला कर दी। जोधपुर से प्रताप को गिरफ्तार करने के लिए फौरन पुलिस के १५-२० जवान एवं ''सरदार-रिसाला'' के १०-१५ घुड़-सवार ''आसा-रा-नाडा'' पहुँच गये और स्टेशन-मास्टर के क्वार्टर को चारों और से घेर लिया तथा सोते हुए प्रताप को गिरफ्तार कर हथकड़ियाँ - बेडियाँ पहिना कर जोधपुर में ''महकमा खास'' ले गये,जहाँ सैंकड़ों दर्शनार्थी, एक क्राँतिकारी को देखने के लिए पहले से ही खड़े थे।

इस घटना के एक प्रत्यक्ष-दर्शी, श्री चंडीदान जी आढ़ा, ग्राम पाँचेटिया, तहसील सोजत, जिला पाली ने निम्न-हस्ताक्षरकर्त्ता को कई वर्ष पूर्व, सिरोही में बताया था कि ''प्रताप को हथकडियाँ एवं बेड़ियाँ पहिने देख कर वे तो रो रहे थे क्योंकि प्रताप, उच्च-कुलोत्पन्न व्यक्ति था। लेकिन प्रताप तो हथकड़ी एवं बेडियाँ पहिने, एक सिंह की भाँति सीना ताने बिल्कुल निर्भीक होकर चल रहा था। उसके चेहरे पर तनिक भी भय नहीं था और उनके पास से निकलते हुए,प्रताप बोला ''रो क्यों रहे हो'' और वह पुलिस के साथ-साथ आगे चला गया।''

इसके बाद, ब्रिटिश पुलिस, बन्दी प्रताप को जोधपुर से सीधा ''लाल-किला'' नई दिल्ली के बैरेक्स में लेजा कर पुलिस लॉक-अप में बन्द कर दिया।

शेष भाग अगले अंक में.....

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

सृष्टि–हमारी दृष्टि में

– पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

पिछले अंक का शेष भाग.....

१०. यदि सब कुछ आकस्मिक है तो नियम का विचार कैसे उपजा?– यदि यह सारा संसार एक आकस्मिक घटना है और इसमें कोई निश्चित नियम काम नहीं करते तो फिर मानवीय मस्तिष्क में नियम की कल्पना अथवा विचार कैसे उपजा? एक मनुष्य इस आकस्मिक संसार (चांस वर्ल्ड) में कर ही क्या सकता है? यदि हमारा किसी नियम (लॉ) में विश्वास ही नहीं तो फिर एक मनुष्य को भूख लगने पर भोजन क्यों माँगना चाहिए? भूख की निवृत्ति भोजन करने से होगी, यह कौन निश्चयपूर्वक कह सकता है? एक मनुष्य भूख लगते ही तो भोजन पकाने लग जाता है क्यों कि उसे यह पक्का विश्वास है भोजन भूख को शान्त करता है। यह एक नियम है। यदि कभी मक्का बोने, कभी जौ बोने और कभी कुछ भी न बोने से गेहूँ उगता है तो फिर कौन गेहूँ के बोने की चिन्ता करेगा। यह क्या कोई अंधेर नगरी चोपट राजा है जहाँ टके सेर भाजी व टके सेर खाजा मिलता है। कहीं कोई अटल नियम है ही नहीं। सब कुछ संयोग (चाँस) पर ही निर्भर करता है। जो कुछ अतीत में घटित हुआ सब संयोग से ही था। और जो कुछ भविष्य में घटित होगा वह भी आकस्मिक है। और जो कुछ भविष्य में घटित हो रहा है, सब आकस्मिक है। और जो कुछ भविष्य में घटित होगा वह भी आकस्मिक ही होगा। ऐसी मानसिकता मनुष्य को कोई प्रोत्साहन नहीं दे सकती । यह सोच मनुष्य को प्रमादी, अनुत्तरदायी व धृष्ट बनाती है।

११. नाम और रूप तो बदले परन्तु रोग वही बना रहा– इस प्रकार हम यह देखते हैं कि यद्यपि नास्तिकों ने आस्तिकों के विरुद्ध बहुत बवण्डर खड़ा किया तथापि वे संसार को कुछ भी सुधार नहीं सके। यदि धार्मिक लोग परस्पर कुत्तों के समान लड़े तो नास्तिक भेड़ियों के समान लड़ते रहे। यदि आस्तिकों ने मस्जिदों, चर्चों व मन्दिरों में मनुष्य का लहू बहाया तो इन नास्तिकों ने रोटी के एक-एक टुकड़े के लिए भयंकर युद्ध लड़े। संसार की समस्या तो ज्यूँ की त्यूँ बनी रही। नाम बदल गया। रूप बदल गया। वास्तविक रोग तो वही रहा। हमारे दृष्टिकोण में बदलाव आने से ही यह बदल सकता था।

१२. एक और विचारधारा है– यह भी एक आस्तिक दृष्टिकोण है परन्तु यह साधारण आस्तिकों के विचार से सर्वथा भिन्न दृष्टिकोण है। इस विचार के अनुसार यह संसार न तो कारागार है, न ही स्वप्न है, न ही दु:ख-सागर है, न ही ज्ञान शून्य है, न ही आकस्मिक घटना तथा न ही निश्चित अटल नियमों से विहीन है अर्थात् यहाँ कोई मनमानी नहीं हो रही। (स्वेच्छाचारी नियामक यहाँ नहीं है।) इनका मानना है कि यहाँ असंख्य नित्य अनादि, अजन्मा अमर जीवों की भी सत्ता है। ये आत्मायें न तो सर्वज्ञ है और न ही सर्वशक्तिमान्। वे ससीम हैं। परन्तु इनकी सीमा के स्तर भिन्न-भिन्न हैं। इन जीवों के किये गए कर्मों के अनुसार ये स्तर घटते बढ़ते रहते हैं। इनका रक्षक व स्वामी वह परमेश्वर है जो इन्हें इनके उपभोग के लिये इस जगत् के रूप में बहुत वस्तुयें प्रदान करता है। ये आत्मायें इस जगत् की वस्तुओं का अपनी क्षमता, योग्यता, शक्ति व विवेकानुसार उपभोग करती हैं।

जिन्होंने ज्ञान प्राप्ति का प्रयास किया और जगत् के पदार्थों का सदुपयोग किया, वे उन्नति करते गए। वे लोग जो आलसी व निष्क्रिय रहे वे उन्नति की दौड़ में पिछड़ गये। इस दर्शन के मानने वाले इस जगत् को एक ऐसा विद्यालय समझते हैं जिसमें ज्ञान की वृद्धि के लिये सब साधन उपलब्ध करवाए गए हैं। विद्यार्थियों को इन साधनों के प्रयोग करने की पूरी स्वतन्त्रता है। जो सावधान और परिश्रमी हैं वे आगे निकल जाते हैं। प्रमादी पिछड़ जाता है और अज्ञानी ही रहता है। जगत् के पुस्तकालय में सब प्रकार की पुस्तकें उपलब्ध हैं। विद्वानों को आगे आकर इन्हें पढ़ना चाहिए। वह व्यक्ति जो पुस्तक को खोलने का कष्ट ही नहीं करता, वह कोई ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। परन्तु जो जगत् रूपी पुस्तक को खोलता है वह इसे ज्ञान से भरपूर पाता है। यह पुस्तक स्वत: ही नहीं खुलती। विद्वानों को अध्ययन के लिए प्यार पैदा करना चाहिए। वैज्ञानिक व शोधकर्त्ता वहीं हैं जो प्रकृति की पुस्तक को खोलते हैं और इसे बड़े ध्यान से सूक्ष्म दृष्टि से पढ़ते हैं। उनकी जेबें रत्नों से भर जाती हैं।

कुछ आस्तिकों का यह विश्वास मिथ्या है कि जगत् परमात्मा का गुप्त कोष है। उस प्रभु के भक्तों का ऐसा कोई अधिकार नहीं है कि वे इस सृष्टि के रहस्यों में झांके जैसे कोई राजा अपने चाकरों द्वारा अपने कामों में हस्तक्षेप या

ताँक-झाँक से अप्रसन्न होता है इसी प्रकार परमेश्वर भी जगत् के गूढ़ रहस्यों में झाँकने वालों और उनका अनावरण करने वालों से अप्रसन्न होता है। परन्तु वे दार्शनिक जिनका हमने अन्त में उल्लेख किया है, यह मानते हैं कि ऐसा कोई भी रहस्य नहीं जिसे भगवान् मानव से छुपा कर रखना चाहता है। राजा को तो दूसरों से अपने दोष छुपाने की चिन्ता हो सकती है परन्तु परमात्मा तो ऐसी सत्ता नहीं है।

जगत् एक रहस्य तो है परन्तु छुपाया कुछ भी तो नहीं- जब परमात्मा ने इस समस्त जगत् की रचना ही मानव के लिए की है तो फिर वह उससे कुछ छुपायगा ही क्यों? इस में तो कोई सन्देह नहीं कि यह जगत् एक रहस्य है। परन्तु इसका अर्थ इससे अधिक कुछ भी नहीं है कि जो यत्न करते हैं, वे जान जाते हैं और जो आलसी बनकर पड़े रहते हैं वे नहीं जान सकते। जो प्रमाद को तजता है, लंगर लंगोटे कसता है और ज्ञान-प्राप्ति के लिए परिश्रम करता है वह ज्ञान-भण्डार में पूरी-पूरी भागीदारी करता है। यह मानसिकता विज्ञान अथवा दर्शन का न तो विरोध करती है और न ही इन्हें निरुत्साहित ही करती है प्रत्युत यह तो उन्हें प्रोत्साहन देती है। यह लोगों को प्रमादी बनने की अनुमति नहीं देती। परन्तु एक बात तो यह करती है- यह लोगों को स्वार्थ के विरुद्ध चेतावनी देती है। मनुष्यों को प्राप्त किये गए ज्ञान को दूसरों के हित में प्रयोग करने का उद्योग करना चाहिए।

परमात्मा सर्वहितकारी है- परमात्मा ने अपने लिए तो जगत् नहीं बनाया। उसे सूर्य की भी कोई आवश्यकता नहीं। उसने अपने मनोविनोद अथवा क्रीड़ा के लिए सूर्य का निर्माण नहीं किया। उसने हमारे नयनों की सहायता के लिए सूर्य को बनाया। इस लिए केवल वही परमात्मा का उपासक है जो दूसरों के भले के लिए अथक परिश्रम करता है। और वह जो ऐसा नहीं करता और केवल स्वर्ग प्राप्ति के लिए प्रभु का नाम जपता रहता है वह स्वयं का तो क्या, आगे के लिए, अच्छे पुनर्जन्म का भी पात्र नहीं है। उसने तोता बनने का तो अभ्यास किया है और यह सम्भव है कि वह अगले जन्म में तोता बन जाए। जो लोग स्वर्ग-प्राप्ति कि इच्छुक हैं उन्हे चाहिए कि वे अपने अहिंसक , विचारपूर्ण व सत्कर्मों द्वारा इस जगत् को ही स्वर्गधाम बना दे फिर उन्हें अपने मरणोपरान्त स्वर्ग में या कहीं अन्यत्र जाने की कोई चिन्ता ही न रहेगी। वे तो मरने से पूर्व ही स्वर्ग में होंगे और जब मरेंगे तो उनकी स्वर्ग-प्राप्ति पक्की। मुण्डकोपनिष्द् के निम्न तीन मन्त्रों में इस दर्शन का संक्षिप्त निरूपण किया गया है:-

द्वा सुपर्णा सुयजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वंत्त्यनश्नन्नयोऽभिचाकशीति।।
समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नोऽनीशया शोचति मुह्यमानः।
जुष्टं यदा पश्यत्यन्यमीशमस्य महिमानमिति वीतशोकः।।
यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णं कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम्।
तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय निरञ्जनः परमं साम्यमुपैति।।[४]

भवार्थ :- इस जगत् रूपी वृक्ष पर एक ही आयु के दो मित्र पक्षी बैठे हैं (एक जीवात्मा और दूसरा परमात्मा)। जीवात्मा इस वृक्ष के फल चखता है। परमात्मा इन्हें नहीं चखता। वह केवल देखता है। वृक्ष व फल जीव के लिए हैं। परमात्मा का इसमें कोई व्यक्तिगत हित या स्वार्थ नहीं है। परमात्मा तो केवल नियामक है। वह भी अपने लिए नहीं, जीवात्मा के लिए है। परमात्मा स्वरूप से ही आनन्दरूप है। उसे तो आनन्द की आवश्यकता नहीं है। जीवात्मा आनन्द का अभिलाषी है। इसलिए परमात्मा जीव के कल्याण के लिए उसे आनन्द प्रदान करता है।

जीवात्मा जगत् रूपी वृक्ष पर बैठे हुए परमात्मा को नहीं देख सकता और वृक्ष की उपयोगिता को भी नहीं समझता। मोह के कारण वह शोक में फंसा रहता है परन्तु जब आँख खोलकर अपने मित्र परमात्मा को देखता है तो उसका अज्ञान छिन्न-भिन्न हो जाता है तब वह दु:ख मुक्त होता है। जैसे एक बच्चा बिस्तर पर पड़ा स्वयं को अकेला अनुभव करके चिल्ला उठता है परन्तु जब उसे पता चलता है कि उसकी माता उसके पास ही है तो वह शान्त हो जाता है। इस प्रकार जीवात्मा भी जब तक स्वयं को अकेला अनुभव करता है और यह समझता है कि कोई भी उसका रक्षक नहीं है, तो वह संसार के दु:खों को चखता है। ये दु:ख अज्ञान के कारण हैं। उसका रक्षक सर्वेश्वर साथ ही है परन्तु उसे उसकी समीपता का ज्ञान नहीं, इसलिए भय व शोक से ग्रस्त है। जब जीवात्मा को अपने पास ही उस सत्ता का पता चलता है जो प्रकाश स्वरूप है, जो जगत् का संचालन करती है, जो ज्ञान स्वरूप है और जो आनन्दघन है तब यह ज्ञान जीवात्मा को पाप और पुण्य से छुटकारा पाने में सहायक होता और यह जीवात्मा आध्यात्मिक सन्तुलन को (समता को) प्राप्त होता है।

यह दर्शन (यह दार्शनिक दृष्टिकोण) वेदों में और उपनिषदों में व्याप्त है परन्तु एक लम्बे समय से विस्मृत हो

चुका था। विभिन्न व्याख्याकारों के हाथों इसकी पर्याप्त विकृति हो गई। सौभाग्य से इस दार्शनिक विचारधारा को महर्षि दयानन्द के रूप में एक महान् उद्घोषक और व्याख्याता मिल गया जिसने धुंध को दूर करके सारे दृश्य को-इस दृष्टिकोण को प्रचण्ड प्रकाश में ला उपस्थित कर दिया। यदि प्रत्येक व्यक्ति की मानसिक सोच ऐसी हो जाए तो परिणाम निम्न प्रकार से होगा-

१. फिर कोई भी व्यक्ति इस सृष्टि को दु:खों का घर (दु:ख सागर) नहीं समझेगा।

२. फिर कोई भी व्यक्ति अपने दु:खों के लिए ईश्वर को दोषी या उत्तरदायी नहीं मानेगा।

३. फिर कोई व्यक्ति नाम मात्र का भक्त नहीं होगा।

४. फिर कोई भी व्यक्ति निठल्ला-प्रमादी नहीं रह सकेगा।

५. प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थ को अपने विनाश का कारण जानेगा।

६. कोई मनुष्य विज्ञान व दर्शन को नास्तिकपन या पापयुक्त नहीं समझेगा।

७. मनुष्य अन्य जीवों को भी अपने जैसा ही मानेगा।

८. वह किसी की हिंसा नहीं करेगा।

९. फिर मनुष्य संसार को एक जुआ घर नहीं समझेगा और भाग्य पर आश्रित नहीं रहेगा।

१०. वह अपने को व दूसरों को दीर्घ जीवी बनाने का प्रयास करेगा।

११. वह नि:शङ्क होकर सृष्टि-नियमों का पालन करेगा।

१२. उसका परमात्मा की सत्ता में अटल अडिग विश्वास होगा।

१३. वह स्वयं को परमात्मा के हाथ में एक खिलौना नहीं मानेगा।

१४. वह आत्म-निर्भर बनेगा।

१५. फिर यदि मनुष्य को दु:ख प्राप्त होगा तो वह दु:ख का महत्त्व या प्रयोजन समझेगा और दु:ख में ही नहीं डूब जायेगा।

टिप्पणियाँ

१. द्रष्टव्य वेदान्तदर्शन ११/२/२९

२. देखिये ऋग्वेद ७/६६/१६, यजुर्वेद ३६/२४ तथा अथर्ववेद १९/६७/१

३. जब किसी का ऋण कोई लौटायेगा ही नहीं तो ऋणदाता किसी पर विश्वास करके क्या ऋण देंगे?

४. द्रष्टव्य मुण्डकोपनिषद्-तृतीय मुण्डक प्रथम खण्ड १/३

अनुवाद-सम्पादक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु

यू-ट्यूब पर वीडियो प्रवचन उपलब्ध

वेद एवं आर्ष साहित्य में रुचि रखने वाले आर्यजगत् एवं धार्मिक जनों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अब यू-ट्यूब पर अनेक वैदिक आर्य विद्वानों के सैंकड़ों नये-नये प्रवचन उपलब्ध हैं। विश्व में कहीं पर भी इन्टरनेट से जुड़ कर ये प्रवचन नि:शुल्क सुने-देखे तथा डाउनलोड किये जा सकते हैं। आप जहाँ भी हैं, यदि आपको वैदिक आर्ष ज्ञान की पिपासा है, वेद एवं आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय के साथ आप इन पर विद्वानों के प्रवचन भी सुनना चाहते हैं, तो इन्टरनेट से जुड़ कर सरलता से सुन सकते हैं।

इसके लिए you tube पर जाकर playlist of paropkarini sabha लिख कर सर्च करें, तो आपको अनेक प्लेलिस्ट मिलेंगी, यथा- वेद प्रवचन, योग दर्शन, ईशोपनिषद् आदि। इनमें इच्छानुसार जाकर लाभ उठाया जा सकता है। आप अपने परिचितों को यह सूचना देकर उन्हें भी लाभ उठाने को प्रेरित कर सकते हैं। भविष्य में अन्य भी नये-नये प्रवचन इस सूची में उपलब्ध कराये जाते रहेंगे।

आर्यसमाज का प्रथम नियम कितना समीचीन?

- मणीन्द्र कुमार व्यास

''सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।'' लगभग १३८ वर्ष पूर्व पुरानी संस्था आर्यसमाज का यह प्रथम नियम जो अपने आपको सत्य सनातन वैदिक धर्म के सिद्धान्तों से अनुप्राणित मानती है। ऐसी मान्यता है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज की स्थापना के साथ इस संस्था के तथाकथित सार्वभौम दस नियमों के द्वारा अपने उद्देश्यों की घोषणा की।

नियम की स्पष्टता - आज आवश्यकता है इस नियम को विस्तार से समझने की। इस नियम के सम्बन्ध में किसी को कितनी भ्रान्ति हो सकती है यह तो तब पता चला कि आर्यजगत् के शीर्षस्थ, मूर्द्धन्य एवं प्रकाण्ड विद्वानों के मध्य विचार-विमर्श किया तो इस नियम के गूढ़ रहस्यों को ही वे न समझ पाए ऐसा प्रतीत होने लगा। इसकी व्याख्या अनेकानेक स्थलों पर प्रकाशित लेखों में देखी गई उनसे भी यह पता लगता है कि अब तक सम्भवत: किसी ने इस नियम के यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे पक्ष पर विचार ही न किया हो।

इस नियम के सम्यक् विश्लेषण के लिए इसमें प्रयुक्त पृथक्-पृथक् पदों की पृष्ठभूमि जान लेना आवश्यक है।

सत्य विद्या - इस नियम में एक शब्द आया है विद्या जिसका विशेषण है सत्य। विद् ज्ञाने धातु से हितार्थ में विद्या शब्द की सिद्धि व्याकरणानुसार होती है। इस विद्या का विशेषण है सत्य। ऐसी विद्या जो कि सत्य या यथार्थ की ओर ले जावे। ऐसी सभी सत्य विद्याएँ जो हमें यथार्थ का ज्ञान कराने में समर्थ हों अर्थात् जो जैसा है उसे वैसा जान लेना। इन सत्य विद्या रूपी साधन से हमें परमेश्वर का ज्ञान होगा। अर्थात् इन सत्य विद्या रूपी साधन से या सत्य विद्याओं के हेतु से परमेश्वर के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान होगा।

पदार्थ - सभी सत्य विद्याओं के बाद अब हम समझें कि पदार्थ क्या होते हैं। इस शब्द का विच्छेदन करने से पता चलता है कि पद का अर्थ अर्थात् पदार्थ। संसार में पदार्थ कहने से उन सबका बोध हो जाता है जिनका अस्तित्व है, जिनका कि नाम है और जिनके द्वारा हमें ज्ञान प्राप्त होता है। **षण्णामपि पदार्थानामस्तित्वाभिधेयत्वज्ञेयत्वानि** (प्रशस्तपादभाष्य: वैशेषिकदर्शनम्) यहाँ पदार्थ के तीन लक्षण स्पष्ट करते हुए वैशेषिक दर्शन के प्रवक्ता महर्षि कणाद एवं आचार्य प्रशस्तपाद ने स्पष्ट किया है कि जिसका अस्तित्व हो अर्थात् जो विद्यमान हो वह पदार्थ है। द्वितीय लक्षण जिसकी कोई अभिधा हो या जिसका कि कोई नाम हो वह पदार्थ है। तृतीय पदार्थ का लक्षण है जिससे कुछ ज्ञान प्राप्त किया जा सकता हो वह भी पदार्थ है। इस सृष्टि में जितने भी भाव जिनमें ये तीन लक्षण विद्यमान हैं वे सभी पदार्थ हैं। पदार्थ के अतिरिक्त इस सृष्टि में जिनका कि अस्तित्व हो, जिनका कि नाम हो और जिनसे ज्ञान प्राप्त किया जा सके उसके अतिरिक्त कुछ नहीं। पृथ्वी से परमेश्वर पर्यन्त जितने भी भाव हैं वे सभी पदार्थ हैं। यहाँ यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि परमेश्वर भी एक पदार्थ है जिसका कि अस्तित्व है, जिसका नाम है और जिससे ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

नियम को समझने के लिये भूमिका -

पदार्थों में परमेश्वर - भाव पदार्थों का आगे स्पष्टीकरण करते हुए महर्षि कणाद ने इसके छ: भेद किये हैं-द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय। जिनका कि विस्तृत विवरण अप्रासंगिक होने के कारण न करके केवल द्रव्य के भेद कहे जा रहे हैं। द्रव्य ९ हैं- पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, दिशा, काल, आत्मा और मन । आत्मा के पुन: दो भेद जीवात्मा तथा परमात्मा या परमेश्वर। अत: परमेश्वर भी एक भाव पदार्थ है जिसका कि अस्तित्व है, जिसका नाम है और जिससे ज्ञान होता है।

आदि मूल - इस नियम को स्पष्ट करने के लिए इसका अगला महत्त्वपूर्ण पद है 'आदि मूल' अर्थात् जो प्रारम्भिक कारण हो या जो कार्य का कारण हो। परमेश्वर भी आदि-मूल है। अर्थात् परमेश्वर इस सृष्टि को रचने में निमित्त-कारण के रूप में इस कार्य रूप जड़ जगत् का नैमित्तक उत्पादक, नियन्ता एवं संहारक भी है। इस सृष्टि में जितने भी कार्य हैं उन सबका निमित्त-कारण तो परमेश्वर है किन्तु प्रसवधर्मी रूप से नहीं।

निमित्त-कारण क्या है? - इसे और स्पष्ट समझ लें कि कारण से कार्य की उत्पत्ति होती है। कार्यरूप दृश्य जगत् का मूल कारण प्रकृति है। इस कारणरूप मूल प्रकृति से ही विकृति अर्थात् कार्यरूप दृश्य जगत् उत्पन्न होता है। इसलिए प्रकृति को प्रसवधर्मी कहा है। जैसे दुग्ध से दधि,

दधि से तक्र, तक्र से मक्खन और मक्खन से घृत बनता है तो घृत के पूर्ववर्ती क्रमशः कारण और उत्तरवर्ती क्रमशः कार्य होते हैं। अर्थात् घृत रूप कार्य का कारण मक्खन, मक्खन का तक्र, तक्र का दधि, दधि का दुग्ध क्रमशः पूर्वापर कारण हैं और उत्तरोत्तर कार्य हैं। अतः स्पष्ट है कि प्रत्येक कारण अर्थात् मूल का कोई न कोई कार्य होता ही है या कार्य का कोई न कोई कारण होता है। प्रसंगवश अब यहाँ कारण के भी तीन भेद समझ लेना चाहिए। प्रथम समवायि, द्वितीय असमवायि और तृतीय निमित्त कारण किसी कार्य की उत्पत्ति में होते हैं।

समवायि कारण - यह अपृथक् भाव से समवायि रूप से विद्यमान रहने वाला मूल कारण होता है जिसके अभाव में किसी द्रव्य का निर्माण नहीं हो सकता। जैसे घट के निर्माण में मिट्टी, कपड़े के निर्माण में धागा। बिना मिट्टी या धागे के क्रमशः घट या कपड़े का निर्माण नहीं हो सकता अतः यह समवायि कारण हुआ।

असमवायि कारण - जो समवायि कारण से भिन्न हो किन्तु किसी कार्य की पूर्णता में वह आवश्यक हो जैसे कि घट के निर्माण में समवायि कारण मिट्टी आवश्यक है तो उसे भिगोने के लिए या कोमल करने के लिए पानी चाहिए फिर उस मिट्टी को आकार देने के लिए दण्ड, चक्र भी चाहिए जिसके द्वारा कुम्भकार घट की रचना कर सकता है। अतः इन सभी कारणों का संयोग जब तक न होगा तब तक घट का निर्माण सम्भव नहीं है।

निमित्त कारण - यह भी कार्योत्पत्ति के लिए अत्यावश्यक है किन्तु न तो यह समवायि कारण है और न ही असमवायि कारण। इसे कर्त्ता कहते हैं। जैसे घट के निर्माण में मिट्टी समवायि कारण तो दण्ड, चक्र, आदि का संयोग असमवायि कारण हुआ तो इसका निर्माण करने वाला कुम्भकार निमित्त कारण हुआ जिसके कारण घट का निर्माण सम्भव हुआ। यह कुम्भकार घट की उत्पत्ति से पूर्व भी वर्तमान था और घट के नष्ट होने के बाद भी वर्तमान हो सकता है। घट की उत्पत्ति या नाश से उसका सीधा कोई सम्बन्ध नहीं परन्तु उसमें घट के उत्पादन का सामर्थ्य है।

सृष्टि की उत्पत्ति - इस उदाहरण से सृष्टि की उत्पत्ति का स्पष्टीकरण होता है। इस सृष्टि की उत्पत्ति में कौन से कारण हैं। यथा सृष्टि की उत्पत्ति में समवायि कारण मूल प्रकृति है जो कि सत् है और शाश्वत है। किन्तु इसके कार्य या विकार यथा महत्तत्व, अहंकार, इन्द्रियाँ, पंच तन्मात्राएँ तथा पृथ्वी आदि पंच तत्त्व युक्त द्रव्य हैं, ये उत्पन्न होते और नष्ट भी होते हैं। असमवायि कारण में इन सभी द्रव्यों का पारस्परिक आनुपातिक संयोग है। निमित्त कारण के रूप में परमेश्वर है जो इस सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व कर्त्ता के रूप में विद्यमान था तथा प्रलय काल में भी रहेगा।

इसलिए परमेश्वर निमित्त कारण या मूल कारण है। उसी को ही अनादि कारण कहा है। परमेश्वर का कोई कारण नहीं होता क्योंकि आदि कारण का कोई कारण नहीं होता। इस कार्य जगत् में जितने भी दृश्य या अदृश्य भाव हैं उनके कारण पर जाते रहिये तो मूल कारण का अनुभव होता जाएगा। अब जैसा कि पहले दृष्टान्त दिया है कि दुग्ध से घृत बनता है। अब यदि दुग्ध का कारण खोजें तो पता चलेगा कि दुग्ध बनता है रस धातु से जो कि गौ आदि के द्वारा ग्रहण किये जाने वाले आहार से निर्मित होता है। आहार पाँच भौतिक तत्त्वों से बनता है। अर्थात् आहार पृथ्वी तत्त्व से, पृथ्वी जल से, जल अग्नि से, अग्नि वायु से और वायु आकाश से निर्मित होता है। जो पूर्वापर मूल कारण हैं। अब आकाश का मूल कारण - **तस्माद्वा एतस्माद्वा आकाशः सम्भूतः** (ब्रह्मानन्दवल्ली १, तैत्तरीयोपनिषद्) अर्थात् उस परमात्मा से आकाश की उत्पत्ति हुई। अर्थात् आकाश का मूल कारण परमेश्वर है।

अब नियम पर ध्यान दें - सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है। उक्त पृष्ठ भूमि के आधार पर इस नियम को स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है। इस नियम में तीन महत्त्वपूर्ण कथ्य हैं-

१. सत्य विद्या, **२.** पदार्थ और **३.** आदि मूल परमेश्वर।

सत्य विद्या - यहाँ सत्य विद्या कहने के स्थान पर विद्या ही कहना था। प्रतीत होता है कि वाक्य में यहाँ सत्य विशेषण अनावश्यक है। क्योंकि विद्या जिसमें हितकारक ज्ञान होता है वही विद्या है, शेष अहितकर विषय अविद्या है। हितकारक सत्य है। अतः विद्या का विशेषण सत्य लगाना आवश्यक नहीं। क्योंकि सत्य से भिन्न अविद्याएँ हैं जिनसे परमेश्वर ज्ञान हो नहीं सकता।

अब यदि सत्य विद्या कहना ही था तो सत्य विद्याएँ ऐसी पद संरचना करनी थी क्योंकि व्याकरणानुसार विशेष्य और विशेषण के लिङ्ग तथा वचन समान होना चाहिए। अतः यह पद संरचना त्रुटिपूर्ण है क्योंकि यहाँ विशेषण बहुवचन तथा विशेष्य एक वचन है।

नियम में दो बार विद्या का प्रयोग पुनरुक्ति दोष है।

'सब सत्य विद्या' शब्द का जब प्रयोग हो ही गया तो फिर से 'जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं' यह कथन कहने की क्या आवश्यकता? एक बार 'सत्य विद्या' में कहा फिर से 'विद्या' कहा तो एक ही वाक्य में पुनरुक्ति दोष सिद्ध होता है।

२. पदार्थ - पदार्थ शब्द भी यहाँ समीचीन नहीं है। क्योंकि वैशेषिकदर्शन के अनुसार परमेश्वर भी एक पदार्थ है। पदार्थ अर्थात् परमेश्वर और परमेश्वर का मूल पदार्थ कैसे हो सकता है। तब तो यह हुआ कि परमेश्वर का मूल परमेश्वर है क्योंकि षड् पदार्थों में परमेश्वर भी एक द्रव्य रूप पदार्थ है। अत: यहाँ कहा गया वाक्य 'जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है' नितान्त भ्रामक, विरोधाभासी, अस्पष्ट तथा अतिव्याप्तिदोषयुक्त है।

३. आदि मूल परमेश्वर - अब यदि पदार्थों का आदि मूल परमेश्वर मानें तो आर्यसमाज के त्रैतवाद के सिद्धान्त पर भी विरोध हो जायेगा। क्योंकि ईश्वर, जीव एवं प्रकृति इनका कोई मूल नहीं होता। ये तीनों अनादि मूल सत्ता हैं। यदि अनादि सत्ता परमेश्वर का मूल पदार्थ कह दिया तो क्या दोष न होगा?

४. यहाँ यह आशंका होती है कि **स्वामी जी** ने लिखा है अत: इस पर विवाद, तर्क या विचार ही न करें? यद्यपि स्वामी जी ने यह नहीं कहा कि उनकी किसी बात पर तर्क वितर्क न किया जाए। जो सत्य है उसे ग्रहण और असत्य है उसे तुरन्त ही त्याग देना चाहिए, किन्तु उनके दुराग्रही अनुयायीगण तो यही चाहते हैं कि स्वामी जी ने जो कहा वह पत्थर की लकीर है वह मानना ही है। क्या ऐसा नहीं लगता कि आज १३८ वर्षों तक भी इस नियम की शब्द संरचना में व्याकरण, दर्शन, सिद्धान्त तथा व्यवहारिक रूप से त्रुटियाँ होते हुए भी स्वीकार करते रहे और नजर अन्दाज करते रहे तो यह आर्यसमाज में प्रबुद्धता की हानि का सूचक नहीं है?

अब यदि **प्रथमे ग्रासे मक्षिकापात:** अर्थात् भोजन के पहले ग्रास में ही मक्खी गिरी तो क्या हालत होगी? वैसा पहले नियम में ही विरोधाभास, अतिव्याप्ति आदि दोष रहेंगे और जिनको कि हम चलाते रहेंगे तो हमारी बौद्धिकता का क्या होगा?

मुम्बई के विद्वान् **पं. ज्येष्ठराज जी ठक्कर** बताते हैं कि मूलत: स्वामी जी ने आर्यसमाज के नियम संस्कृत भाषा में तैयार किये थे फिर इनका हिन्दी में अनुवाद किया गया था। हो सकता है कि मूल संस्कृत नियम **या: सत्यविद्या: विहिता: पदार्था: तेषां सर्वेषां प्रभुरादिमूलम्** को हिन्दी में अनुदित करने में त्रुटि की गई हो यह अनुसन्धान का विषय है। **पं. राजेन्द्र जिज्ञासु** प्रकाण्ड विद्वान् होने के साथ ही आर्यजगत् के शीर्षस्थ इतिहासज्ञ भी हैं। सम्भव है कि उनके पास स्वामी जी द्वारा सबसे पहले संस्कृत में निर्मित आर्यसमाज के ३० नियम सुरक्षित हों। जो कि विद्वानों ने १० नियमों में समाहित कर संक्षिप्त कर हिन्दी में अनुदित कर दिये थे। अत: इस प्रकार चले आ रहे इस नियम पर पुनर्विचार की आवश्यकता विद्वत् गण समझते हों तो अवश्य ही विचार कर निर्णय ले कर मार्ग दर्शन करें।

समाधान हेतु निवेदन - मुझ जैसा अल्पज्ञ जो कि दर्शनादि शास्त्रों का साधारण विद्वान् भी नहीं और न ही वैदिक सिद्धान्तों का इतना गहन चिन्तन किया, न ही मेरी योग्यता कि इन सिद्धान्तों पर आशंका व्यक्त करूँ और न ही मैं किसी विवाद को उत्पन्न करना चाहता हूँ। अनेक वर्षों से इस पर विचार करते हुए केवल इसलिए यह लेख लिखकर भी प्रकाशित नहीं करवाया कि कहीं अश्रद्धा का भाव आर्यसमाज या स्वामी जी के प्रति न उत्पन्न हो जाये और विरोधियों को कोई अवसर न मिल जाये इसलिये यह विचार सीमित ही रखा और मैं विद्वानों में चर्चा करता रहा। अब जब यह बात सामने आ ही गई (परोपकारी मार्च २०१३) तो मैंने अपने विचार प्रस्तुत करने का दुस्साहस किया है। हालाँकि मुझे ज्ञान है कि यह मेरी अल्पमति हो सकती है जिसे विद्वान् अक्षम्य मान सकते हैं किन्तु इस लेख का समाधान अवश्य करने की अनुकम्पा करेंगे।

- यज्ञाङ्ग:, ३६, सुभाषनगर, उज्जैन, म.प्र.-४५६०१०, चलभाष-९४२५०९२३४३

समाधान एवं समीक्षा

- आचार्य सत्यजित्

श्री मणीन्द्र कुमार व्यास ने अपने लेख 'आर्यसमाज का प्रथम नियम कितना समीचीन?' में आक्षेप व जिज्ञासा रखी हैं। उनके आक्षेप प्रथम नियम पर तो हैं हीं, परोक्ष रूप से ये आक्षेप महर्षि दयानन्द पर भी किये गये हैं। आक्षेप आर्यसमाज पर भी किये गये हैं, आर्यसमाज के अब तक के विद्वानों व सदस्यों पर भी किये गये हैं। उनके खुल कर किये गये आक्षेपों का स्वागत है। आक्षेपों की समीक्षा व समाधान बाद में किया जाएगा, साथ में उनके कथनों की समीक्षा-समालोचना भी की जाएगी ताकि उन्हें अपनी आधारभूत मान्यताओं का यथार्थ अवगत हो सके।

यदि वे विद्वानों को ठीक सुन-पढ़ पाते, तो उन्हें इतने आक्षेप न करने पड़ते व जिज्ञासा भी प्रायः शान्त हो जाती। उदाहरण के लिए उन्होंने अपने लेख के अन्त में परोपकारी मार्च (द्वितीय) २०१३ के एक लेख का संकेत किया है, यह लेख 'आदि मूल-परमेश्वर' के नाम से डॉ. वेदपाल जी, जागृति विहार, मेरठ का है। इस लेख को यदि ठीक से पढ़ा गया होता, समझा गया होता, तो श्री मणीन्द्र कुमार व्यास की अधिकांश शंकाओं का समाधान हो गया होता। खैर, कोई बात नहीं, इस विषय को स्पष्ट करने के लिए एक प्रयास और किया जा रहा है। यदि उन्हें इस पर भी शंका शेष लगे तो वे पुनः पूछ सकते हैं।

अब उनके आक्षेपों, जिज्ञासाओं पर क्रमशः समाधान लिखा जा रहा है।

श्री मणीन्द्र कुमार व्यास- आक्षेप १- ''यहाँ सत्य विद्या कहने के स्थान पर विद्या ही कहना था। प्रतीत होता है कि वाक्य में यहाँ सत्य विशेषण अनावश्यक है। क्योंकि विद्या जिसमें हितकारक ज्ञान होता है वही विद्या है, शेष अहितकर विषय अविद्या है। हितकारक सत्य है। अतः विद्या का विशेषण सत्य लगाना आवश्यक नहीं। क्योंकि सत्य से भिन्न सभी अविद्याएँ हैं। जिनसे परमेश्वर ज्ञान हो नहीं सकता।

अब यदि सत्य विद्या कहना ही था तो सत्य विद्याएँ ऐसी पद संरचना करनी थी क्योंकि व्याकरणानुसार विशेष्य और विशेषण के लिङ्ग तथा वचन समान होना चाहिए। अतः यह पद संरचना त्रुटिपूर्ण है क्योंकि यहाँ विशेषण बहुवचन तथा विशेष्य एक वचन है।''

समाधान एवं समीक्षा-१- 'सत्य विद्या' इस अंश में 'सत्य' विशेषण आवश्यक है। यहाँ 'विद्या' का अर्थ है 'ज्ञान'। विद्या/ज्ञान सत्य भी हो सकता है व मिथ्या भी। महर्षि यहाँ सत्य व मिथ्या दोनों प्रकार के ज्ञान (विद्या) का ग्रहण नहीं करना चाहते हैं। चूँकि परमेश्वर मात्र सत्य-ज्ञान/विद्या का आदिमूल (प्रारम्भिक आधार/आश्रय) है, न कि मिथ्या-ज्ञान/विद्या का, अतः महर्षि ने वही लिखा जैसी कि वास्तविकता है। यदि 'सत्य' शब्द विशेषण रूप में न होता, तो कोई मिथ्या-विद्या/ज्ञान का भी ग्रहण कर सकता था, अतः स्पष्टता व सरलता के लिए 'सत्य' विशेषण का होना सार्थक है, आवश्यक है।

कोई प्रश्न उठा सकता है कि विद्या/ज्ञान तो सदा सत्य ही होता है। जो सत्य होता है उसे ही विद्या/ज्ञान कहा जाता है, जो मिथ्या-असत्य हो उसे विद्या/ज्ञान नहीं कहा जा सकता, अतः मात्र 'विद्या' शब्द से ही अभिप्राय स्पष्ट हो जाता, 'सत्य' विशेषण लगाना अनावश्यक है। इसका समाधान यह है कि विद्या/ज्ञान से अनेकत्र मात्र 'सत्य' - विद्या/ज्ञान का भी ग्रहण होता है, किन्तु ऐसा सर्वत्र नहीं होता है। यदि विद्या/ज्ञान सदा 'सत्य' ही होता तो शास्त्रों में 'मिथ्याज्ञान' शब्द का प्रयोग न होता, जैसे कि ''**दुःखजन्मप्रवृत्तिदोषमिथ्याज्ञानानाम्....**'' (न्यायदर्शन १.१.२), ''**विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम्**'' (योगदर्शन १.८)। स्पष्ट है कि 'ज्ञान' मिथ्या भी हो सकता है। लोक में भी हम ऐसे शब्दों का प्रयोग करते ही हैं।

भाषा के इन प्रयोगों से स्पष्ट हो जाता है कि प्रथम नियम में 'सत्य' विशेषण युक्त 'विद्या' शब्द का होना उचित है और निस्संदेह अर्थ बोध कराने के लिए आवश्यक है।

'सत्य' विशेषण को अनावश्यक मानने के पीछे श्री मणीन्द्र कुमार व्यास का जो तर्क/आधार है, अब उस की समीक्षा कर लेते हैं। वे लिखते हैं- ''क्योंकि विद्या जिसमें हितकारक ज्ञान होता है वही विद्या है, शेष अहितकर विषय अविद्या है।'' वैसे तो इनका यह वाक्य अपने आप में अस्पष्ट है, भ्रान्तिजनक है, पुनरुक्ति युक्त है। ये वे दोष हैं जिन्हें वे प्रथम नियम में देख रहे थे। होना तो यह चाहिए था कि उनके वाक्य में कम से कम वे दोष तो न होते जिन दोषों को वे प्रथम नियम पर लगा रहे थे। उनके वाक्य स्पष्ट होते, भ्रान्तिजनक न होते, पुनरुक्ति युक्त न होते तभी तो उनकी प्रबुद्धता व बौद्धिकता प्रकट होती।

पुनरुक्ति व अस्पष्टता देखिए- ''क्योंकि विद्या जिसमें हितकारक ज्ञान होता है, वही विद्या है।''' विद्या' शब्द यहाँ दो बार पढ़ा है, जो कि व्यर्थ अनावश्यक है, अतः पुनरुक्ति है। विद्या को समझाते हुए वे कहते हैं ''जिसमें हितकारक ज्ञान होता है, वही विद्या है।'' जिसमें अर्थात् किस में? अस्पष्ट है। हितकारक ज्ञान तो ईश्वर में भी है, वेद में भी है, अन्य मनुष्यों व पुस्तकों आदि में भी है। क्या इन सब ईश्वर, वेद, मनुष्य, पुस्तकों को 'विद्या' कह सकते हैं? नहीं, इस प्रकार उनकी परिभाषा अतिव्याप्ति दोष से भी युक्त हो रही है। तो फिर वे किसे 'विद्या' मानते हैं?

आगे लिखते हैं- ''शेष अहितकर विषय अविद्या है।'' इनकी दृष्टि में अविद्या कोई 'विषय' है। 'विषय' शब्द से क्या तात्पर्य लेवें? अस्पष्ट है। यदि अहितकर विषय अविद्या है, तो उनके मत में हितकर विषय को विद्या कहा जाना चाहिए। यहाँ 'विषय' से उनका क्या

तात्पर्य है? अस्पष्ट है।

तो जिस हेतु/आधार से वे 'सत्य' शब्द को अनावश्यक सिद्ध कर रहे हैं, वह हेतु/आधार ही अस्पष्ट असिद्ध है, भ्रान्तियुक्त है, अत: प्रबुद्धता व बुद्धिपूर्वक स्वीकार नहीं किया जा सकता। इनके वाक्यों में स्थान-स्थान पर बार-बार अस्पष्टता, पुनरुक्ति, अतिव्याप्ति आदि दोष दिखते हैं, उनमें से कुछ यथास्थान यथावसर आगे लिखे जाएंगे।

'सत्य विद्या' शब्द की पृष्ठभूमि लिखते हुए वे अपने लेख के आरम्भ में लिखते हैं- ''विद् ज्ञाने धातु से हितार्थ में विद्या शब्द की सिद्धि व्याकरणानुसार होती है।'' उन्होंने वहाँ यह स्पष्ट नहीं किया कि व्याकरण के किस नियम से व कैसे हितार्थ में 'विद्या' शब्द की सिद्धि होती है। कम से कम वहाँ यह तो बताते कि हितार्थ में सिद्ध 'विद्या' शब्द का अर्थ क्या होगा? यद्यपि अन्य स्थान पर उन्होंने लिखा- ''जिसमें हितकार ज्ञान होता है, वही विद्या है'' क्या हितार्थ में सिद्ध 'विद्या' शब्द का वे यही अर्थ स्वीकारते हैं? इस अर्थ की अस्पष्टता पूर्व में लिखी जा चुकी है। यदि यही अर्थ वे स्वीकारते हैं तो कृपया बतावें कि व्याकरणानुसार यह अर्थ कैसे आया?

इनके अनुसार विद्या (ज्ञान) हितकारक ही होती है। क्या शराब बनाने की विद्या, चोरी करने-जेब काटने की विद्या, मांस पकाने की विद्या, कम तोलने-मिलावट करने की विद्या भी हितकारक होती है? विद्या/ज्ञान तो हितकारक व अहितकारक दोनों हो सकते हैं। अत: यह आग्रह ठीक नहीं कि विद्या तो हितकारक ही होती है। अत: महर्षि का प्रथम नियम में 'सत्य' शब्द का विशेषण रूप में प्रयोग सार्थक, सोद्देश्य व आवश्यक है।

श्री मणीन्द्रकुमार व्यास ने 'सत्य विद्या' यहाँ एक व्याकरण की त्रुटि का आक्षेप भी किया है। इनके अनुसार यहाँ 'सत्य विद्याएँ' ऐसी पद रचना होनी चाहिए। उन्होंने कारण बताया कि विशेषण-विशेष्य में समान वचन होना चाहिए। उनके अनुसार विशेषण (सत्य) में बहुवचन है, अत: विशेष्य (विद्या) में भी बहुवचन होना चाहिए। प्रथम तो यहाँ उन्हीं से स्पष्टीकरणार्थ प्रश्न है कि उन्हें विशेषण 'सत्य' शब्द में बहुवचन का ज्ञान कैसे हुआ? यदि 'सत्य' शब्द में बहुवचन का दिखना भ्रान्ति है, तो उनका आक्षेप का आधार ही ध्वस्त हो जाता है, आक्षेप- प्रश्न बचेगा ही नहीं। यदि थोड़ी देर के लिए मान भी लें कि विशेषण-सत्य शब्द में बहुवचन है, तो भी यह नियम कहाँ है कि विशेषण के अनुसार विशेष्य में वचन होना चाहिए? नियम तो यह है कि विशेष्य के अनुसार विशेषण में वचन होना चाहिए। यदि इसे स्वीकारें तो उन्हें विशेष्य (विद्या) के एकवचन के अनुसार विशेषण (सत्य) में एकवचन करके पद-रचना दिखानी चाहिए। यदि वे प्रथम नियम में अपना आक्षेप साधार-सप्रमाण प्रस्तुत कर पाएँ तभी उन्हें संशोधन की सम्मति देने का नैतिक अधिकार प्राप्त हो सकता है, तभी उनका आक्षेप उत्तर देने योग्य बन पाएगा।

वैसे महर्षि दयानन्द जानते थे कि 'विद्या' शब्द में कहाँ पर बहुवचन लगाना चाहिए, जैसा कि उन्होंने तीसरे नियम में लिखा- ''वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।'' प्रथम नियम में चूँकि 'उन सब' यह अंश जुड़ा है अत: विद्या शब्द में बहुवचन का प्रयोग ठीक नहीं, जैसे- 'सब सत्य विद्याओं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।' इसलिए जब 'उन सब' यह अंश हटा देंगे तो 'विद्या' शब्द का बहुवचन युक्त प्रयोग उचित हो सकता था- 'सब सत्य विद्याओं का आदिमूल परमेश्वर है।'

शेष भाग अगले अंक में.....

वेदगोष्ठी का आयोजन

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष पर २७वीं वेदगोष्ठी का आयोजन ऋषि मेले के साथ ही दीपावली के पश्चात् ३१ अक्टूबर तथा १, २ नवम्बर २०१४, शुक्र, शनि, रविवार को किया गया है। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विषय 'भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद' रखा गया है। इससे पूर्व वर्ष में कुछ विचार ग्यारहवें समुल्लास के सम्बन्ध में विचार किया गया था। इस वर्ष की गोष्ठी में ऋषि दयानन्द के पश्चात् प्रचलित मत सम्प्रदायों के सिद्धान्त और उद्देश्यों पर विशेष चर्चा होगी। किन विशेष सम्प्रदायों को विचार के लिए लिया जायेगा, इसकी सूचना आगे के अङ्क में दी जा सकेगी।

श्रेष्ठ निबन्ध के लिए प्रथम ६१००, द्वितीय ४१००, तृतीय पुरस्कार ३१०० रुपये रखे गये हैं। गत वर्ष के श्रेष्ठ निबन्धों को आगामी ऋषि मेले के अवसर पर पुरस्कृत किया जायेगा।

- संयोजक

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ मई २०१४ तक)

१. स्वास्तिकाम: चेरिटेबल ट्रस्ट, अमरावती, महाराष्ट्र २. वैद्य स्वामी दयानन्द गिरी, भिवानी, हरि. ३. श्री सनवेरलाल माली, रामसर, राजस्थान ४. श्री सतीश नवाल, रामसर, राजस्थान ५. श्री राजेन्द्र कुमार जैन, अजमेर ६. श्री सत्यनारायण काकाणी, रामसर, राजस्थान ७. श्री शिवचरण माहेश्वरी, रामसर, राजस्थान ८. श्री महावीर प्रसाद, रामसर, राजस्थान ९. श्री हरिनिवास ईनाणी, अजमेर १०. श्री नारायण गैना, अजमेर ११. श्री यज्ञदेव सोमाणी, अजमेर १२. श्री रामरतन आवासरा, अजमेर १३. श्री नवनीत कुमार मून्दडा, नसीराबाद, राजस्थान १४. श्री बालमुकुन्द नवाल, गुलाबपुरा, राज. १५. श्री पुरुषोत्तम नवाल, गुलाबपुरा, राज. १६. श्रीमती गीता खरोल, रामसर, राज. १७. श्री पृथ्वीराज पाटीदार, प्रतापगढ़, राज. १८. श्री सत्यनारायण पाटीदार, प्रतापगढ़, राज. १९. श्री गुलाबसिंह पाटीदार, प्रतापगढ़, राज. २०. श्री भोपराज साहू, प्रतापगढ़, राज. २१. श्री राजेन्द्र व्यास, प्रतापगढ़, राज. २२. श्री मधुलाल मगड़ा, प्रतापगढ़, राज. २३. श्री श्याम, प्रतापगढ़, राज. २४. श्री मोहनलाल उपाध्याय, प्रतापगढ़, राज. २५. श्री माँगीलाल व्यास, प्रतापगढ़, राज. २६. श्री रामप्रसाद, प्रतापगढ़, राज. २७. श्री लक्ष्मीनारायण पटेल, प्रतापगढ़, राज. २८. श्री मोदीराम, प्रतापगढ़, राज. २९. श्री मोहन गोखले, प्रतापगढ़, राज. ३०. श्री ताराचन्द पाटीदार, प्रतापगढ़, राज. ३१. श्री जगदीश, प्रतापगढ़, राज. ३२. श्री नेतराम, प्रतापगढ़, राज. ३३. श्री गोपाल, प्रतापगढ़, राज. ३४. श्री भैरूलाल, प्रतापगढ़, राज. ३५. श्री हीरालाल आंजना, प्रतापगढ़, राज. ३६. श्री ओमप्रकाश आंजना, प्रतापगढ़, राज. ३७. श्री विजय तोषनिवाल, कोटा, राज. ३८. श्री नीरज चौहान, मेरठ, उ.प्र. ३९. श्री रमेशचन्द आर्य, नई दिल्ली ४०. श्रीमती उमा मोंगा, दिल्ली ४१. श्री शिवकुमार मदान, नई दिल्ली ४२. श्री मनोज, जोधपुर, राज. ४३. श्री विजयसिंह, अजमेर ४४. श्री पदमसिंह चौधरी, जोधपुर, राज. ४५. पार्थ दामा, बांसवाड़ा, राज. ४६. श्री राजेश मल्होत्रा, अमृतसर, पंजाब ४७. मेहता माता, अजमेर ४८. श्री गजेन्द्र अरोड़ा, पाली मारवाड़, राज. ४९. श्रीमती ललिता देवी, जोधपुर, राज. ५०. श्री अभिषेक पारीक, अजमेर ५१. श्रीमती शान्ता, अजमेर ५२. श्री कुलदीप, रोहतक, हरि. ५३. श्री दिनेश मून्दड़ा, अजमेर ५४. श्री बलवीरसिंह बत्रा, अजमेर ५५. श्रीमती सुषमा मल्होत्रा, पानीपत, हरि. ५६. श्रीमती श्रुति चौबे, पानीपत, हरि. ५७. मा. कपूरसिंह आर्य, जीन्द, हरि. ५८. श्री हर्षवर्धन शास्त्री, श्रीगंगानगर, राज. ५९. श्री सदानन्द, टोंक, राज. ६०. श्री रणवीर आर्य, पानीपत, हरि. ६१. श्री चौथमल शर्मा, जयपुर, राज. ६२. श्री चन्द्रमुनि, श्रीगंगानगर, राज. ६३. सुश्री मानवी, दिल्ली ६४. श्री देवमुनि, अजमेर ६५. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों को नि:शुल्क दिया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३१ मई २०१४ तक)

१. श्री कल्प उपाध्याय, अजमेर २. श्री प्राञ्जल उपाध्याय, अजमेर ३. राजपूताना म्युजिक हाउस, अजमेर ४. श्री आनन्द मुनि, हिसार, हरि. ५. श्रीमती कामाक्षी, अजमेर ६. श्री महेश, रामसर, राज. ७. श्रीमती प्रेमलता शर्मा, अजमेर ८. श्रीमती सुशीला आर्या, मेरठ, उ.प्र. ९. श्रीमती उमा मोंगा, दिल्ली १०. श्री श्याम सुन्दर, अजमेर ११. श्रीमती भँवरीदेवी

सोमाणी, अजमेर १२. श्री अरजव एस. माहेश्वरी, अजमेर १३. श्री विजयसिंह गहलोत, अजमेर १४. सुश्री शशिबाला, फरीदाबाद १५. सुश्री सुधा आर्या, दिल्ली १६. श्रीमती दीपशिखा, अजमेर १७. श्री निवेश आर्य, अजमेर १८. श्री मयंक, अजमेर १९. श्री गणपतदेव सोमाणी, अजमेर २०. डॉ. नरेन्द्र माहेश्वरी, नसीराबाद, राज. २१. श्री जितेन्द्रसिंह वेदी, अजमेर २२. श्रीमती चम्पा देवी, अजमेर २३. श्री त्रिलोकचन्द खटीक, अजमेर २४. श्री बलवीरसिंह बत्रा, अजमेर २५. श्री महेन्द्र मोहन, श्रीगंगानगर, राज. २६. श्री सन्दीप आर्य, अजमेर २७. श्रीमती शिखा अंशुमान अवस्थी, जोधपुर, राज. २८. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

पुस्तक समीक्षा

१. पुस्तक का नाम - आकाश अनन्त है
लेखक - आचार्य भगवान दैव 'चैतन्य'
प्रकाशक - उत्कर्ष कला केन्द्र (महर्षि दयानन्द धाम) महादेव तहसील, सुन्दर नगर, जि. मण्डी, हि.प्र.-१७४४०१
मूल्य - ५०/- रु. **पृष्ठ संख्या** - १०८

हिन्दी साहित्य में भाव-भाषा, छन्द, अलङ्कार काव्य द्वारा पूर्ण भावों की अभिव्यक्ति होती है। काव्य में तुकान्त व अतुकान्त का अपना ही भिन्न रूप है। लय, ताल, स्वर से भी निखार आता है। सामान्यतया आज अतुकान्त कविताओं का युग आ गया है। इसी में श्रोता भाव विभोर हो जाते हैं। इसी कड़ी में आचार्य भगवान देव 'चैतन्य' का काव्य रूप अतुकान्त हमारे सामने है। 'आकाश अनन्त है' नाम से ही आकर्षण बढ़ जाता है, अपनी पुस्तिका में ५१ कविताओं को भिन्न-भिन्न नामों से उद्धृत किया है। इसमें प्रकृति की छट्टा को अपने भावों में संजोया है। शब्द- अर्थ कविता में भावों को कवि ने दर्शाया है-

गहरे अन्धकार में है,
जो अविद्या के उपासक है।
अज्ञानी उससे भी गहरे अन्धकार में हैं
जो विद्या में रत है-
पाण्डित्य के अहंकारी।

२. पुस्तक का नाम - यायावर तेरे प्रति रूप
लेखक - आचार्य भगवान दैव 'चैतन्य'
प्रकाशक - उत्कर्ष कला केन्द्र (महर्षि दयानन्द धाम) महादेव तहसील, सुन्दर नगर, जि. मण्डी, हि.प्र.-१७४४०१
मूल्य - ८०/- रु. **पृष्ठ संख्या** - ७५

पुस्तिका में ३०० मुक्तक दिये हैं। साहित्य में मुक्तकों का गौरवमय रूप है। कवि का प्रथम संस्करण है। इसका वाचन कितना अनुपम है, आपके समक्ष है-

१. बहुत अच्छी हैं शहीदों की रीत की बातें,
अपना जिस्म देकर रूह से प्रीत की बातें।
आओ मगर हम भी कुछ बेहतर कर दिखाएँ,
बहुत दोहरा लीं हमने अतीत की बातें।।
२. खामोशी तोड़ूँ तो अपनी पीड़ा पराई होगी,
जख्म तो कोई बांटता नहीं जग-हंसाई होगी।
लोग कहते हैं हमसे कोई गीत-गजल सुनाओ,
कुछ कहूँ अगर तो किसी की रूसवाई होगी।।

सभी मुक्तकों का आस्वादन आपको करना है। भाषा में अन्य भाषा के शब्द हैं फिर भी आपके हृदय को आनन्दमय अवश्य करेंगे। लेखक का प्रयास उत्तम। पाठक अवश्य रसास्वन के लिए अग्रसर होंगे। साधुवाद।

- देवमुनि, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

पतों में नवीनीकरण व संशोधन की प्रक्रिया

सभी विद्वानों व परोपकारी के सुधी पाठकों से निवेदन है कि अपना नाम, पत्र व्यवहार का पूरा पता (पिन कोड सहित), दूरभाष संख्या और ई-मेल किसी भी माध्यम से भिजवाने का कष्ट करें जिससे कि परोपकारिणी सभा के वर्तमान के पतों में नवीनीकरण व संशोधन की प्रक्रिया में सहयोग मिल सके।

भूत फैशन का

-रमेश मुनि

पिछले अंक का शेष भाग.....

पिछले लेख में हमने देखा कि ''भूत'' जो पहनने ओढ़ने के रूप में फैशन बन कर हमें दु:खी क्लेशित या आतंकित कर रहा है किन्तु हम इसे समझ नहीं पा रहे हैं। इसके कारण हम इसी समय प्रभावित होते दिखाई नहीं दे रहे हैं क्योंकि सीधा प्रभाव हमारे जीवन या व्यवहार पर दिखाई नहीं पड़ता। महर्षि चरक ने स्वास्थ्य के तीन स्तम्भ कहे हैं- १. आहार, २. निद्रा, ३. ब्रह्मचर्य

आहार- भोजन के रूप में प्रयोग किए जाने वाले पदार्थ और शरीर को ढांपने के लिए प्रयोग किए जा रहे वस्त्र आते हैं।

निद्रा- रात्रि में समय पर सोना, प्रात: समय पर उठना।

ब्रह्मचर्य- हमारी सभी इन्द्रियों को अपने वश में रखना।

इस प्रकार पिछले लेख में हमने आहार रूपी वस्त्रों के प्रयोग के बारे में लिखा। हम लोग देख-देख कर लुभावने वस्त्र अधिक दामों में खरीद कर पहन रहे हैं। जिनसे शरीर का अधिक भाग या तो नंगा रहता है या मोटे और तंग कपड़ों में जकड़ा रहता है। ये दोनों अवस्थाएँ हमारे वातावरण (क्लाइमेट) जिसमें अत्यधिक धूप गर्मी रहती है के लिए उपयुक्त नहीं। सूर्य की धूप-गर्मी चमड़ी को लम्बे समय के बाद प्रभावित करके अनेक चमड़ी के रोगों को या कैंसर आदि को उत्पन्न करने में हमारे शरीरों में हार्मोन में परिवर्तन करने का कारण बनती है। यदि हमें इस भूत से आतंकित होने से बचना है तो हमें भारतीय संस्कृति अनुसार वस्त्र धारण करना सीखना होगा, अधिकतर सूती कपड़े जो पारदर्शक न हों प्रयोग करने होंगे वरना चमड़ी का रोग हो जाये तो जीवन भर पीछा छूटता नहीं है।

अब हम आहार के दूसरे भाग फैशन रूपी भूत के बारे में विचार करते हैं जिसका प्रयोग हम खाने के रूप में प्रयोग करते हैं। इनमें चावल, रोटी, दालों, सब्जियों का प्रयोग भोजन के लिए सृष्टि के प्रारम्भ से चला आ रहा है जिसे शाकाहारी भोजन कहा जाता है। इसका प्रयोग आगे भी चलता रहेगा, जो चलना भी चाहिए। कुछ वर्षों से भोजन के रूप में व्यापारी वर्ग धन इक्ट्ठा करने के लिए नए-नए रूप देकर भोजन की भिन्न-भिन्न किस्में परोस रहा है। इनसे मनघड़न्त लाभ बता कर दूरदर्शन पर बार-बार चटखारे लेते मॉडलों को दिखाया जा रहा है, जिसे देख-देख कर विशेष रूप से बच्चे प्रभावित होते हैं और कुछ प्रभाव उनके माता-पिता पर भी पड़ता है। भोजन के इन नए पदार्थों को फास्ट-फूड के नाम से पुकारा जाता है। इनमें मेगी नूडल्स, कुरकुरे, कॉर्न फ्लेक्स, पिज्जा, बर्गर आदि आदि नामों से पुकारा जाता है। इनको बनाने में आवश्यकता से अधिक नमक, मिर्च मसालों का प्रयोग किया जाता है। इन्हें लम्बे समय तक टिकाऊ बनाए रखने के लिए अनेकों केमिकल्स मिलाए जाते हैं। इन केमिकल्स का सोर्स शाकाहारी है या मांसाहारी, खाने वाले नहीं जानते। कुछ लोग अनजाने में इन पदार्थों को शाकाहारी समझ प्रयोग करते हैं किन्तु अनजाने में उन पदार्थों के मांसाहारी होने के कारण ये शाकाहारी लोग भी मांसाहारी बन जाते हैं।

भारत में अधिकतर लोग स्वयं या बच्चों के लिए केक, चॉकलेट आदि को शाकाहारी समझ लेते हैं किन्तु प्राय: ऐसी किस्म के पदार्थ मांसाहारी होते हैं। कुछ दिनों पहले समाचार आया था कि किटकेट नामक चॉकलेट बनाने वाली कम्पनी इसका दूध से बने पदार्थ के रूप में करती थी किन्तु कम्पनी ने स्वीकार किया है कि हम इसमें बछड़ों का कोमल मांस डालते हैं। प्राय: महिलाओं का भी धनोपार्जन के लिए कार्य करने से घर की रसोई में काम करने के लिए समय मिल नहीं पाता या कुछ महिलाएँ इसलिए काम करना नहीं चाहती जिस कारण कुछ परिवार आजकल ऐसे मिलते हैं जिनके घरों में भोजन पकाया नहीं जाता। बाहर से फास्टफूड़ के टिफन मँगवाए जाते हैं। कभी-कभी इनका भोजन के रूप में प्रयोग करने पर अधिक हानि नहीं होती किन्तु लगातार खाते रहने से तेज मिर्च मसाले, तेल का अधिक प्रयोग और केमिकल्स मिलकर अनेक प्रकार के रोगों को उत्पन्न करते हैं। कब्ज, एसीडीटी, गैस का अधिक बनना, यकृत विकार तो प्राय: मिलते हैं। लम्बे प्रयोग से इनसे कैंसर आदि रोगों की सम्भावना बढ़ जाती है।

आजकल अधिक उपज के लोभ में खेतों में रासायनिक खादों का प्रयोग अत्यधिक हो रहा है, फिर

फल आ जाने पर उन्हें कीटों से बचाने के लिए अत्यधिक कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है। रासायनिक खाद और कीटनाशक जब सब्जी, फल आदि के द्वारा हमारे शरीरों में पहुँचते हैं तो कैंसर का कारण बनते हैं। उत्तर प्रदेश में एक गाँव में प्राय: बैंगन की बुआई की जाती है और इसके लिए कीटनाशक प्राय: एक दिन छोड़कर प्रयोग किए जाते हैं जिस कारण वहाँ की धरती और जल दोनों विषाक्त हो चुके हैं जिस कारण उस गाँव की हर परिवार में कम से कम एक व्यक्ति तो कैंसर से पीड़ित है ही।

८-५-२०१४ की राजस्थान पत्रिका-''जहर की खेती कब तक'' शीर्षक में फसल अधिक मात्रा में हो इसके लिए रासायनिक खाद और कीटनाशकों के अधिक प्रयोग से खाने-पीने का सामान जहरीला हो चुका है, यह तथ्य प्रमाणों के साथ प्रस्तुत किया गया है। पहले पंजाब अनाज उत्पादन में सबसे आगे था किन्तु रासायनिक खाद के अधिक प्रयोग से धरती बंजर होती जा रही है। इसमें पंजाब के भटिण्डा, फरीदकोट, मोगा, मुक्तसर, फिरोजपुर, संगरुर और मानसा जिले अधिक प्रभावित हैं। इन्हीं जिलों के अधिक किसान कैंसर के शिकार हो रहे हैं। इसी अन्न के मैदा, आटा, आदि से बने भोज्य पदार्थ अर्थात् फास्टफूड व जिनमें और केमिकल्स मिलाए जाते हैं कैसा प्रभाव कर रहे होगें?

इसके विपरीत हैदराबाद के स्वयं सेवी संगठन ''जॉन पेस्टीसीडल मैनेजमेन्ट मूवमेंट'' कीटनाशकों के स्थान पर जैविक खाद, चक्रीय फसलों के जरिए खेती करने पर बल देता है। आन्ध्रप्रदेश में लाखों किसानों ने इसे अपनाया है और लाभ उठा रहे हैं। इसके लिए पशुधन की रक्षा भी करनी होगी ताकि गोबर, गोमूत्र, दूध, दही, घी (पञ्च गवय) का प्रयोग करके स्वस्थ्य प्रदान करने वाले अन्न उत्पन्न हो, उनसे भोजन बनाकर हम भी स्वस्थ रह सके।

इसी प्रकार पेय पदार्थ कोकाकोला, पेप्सी या मादक द्रव्य हमारे स्वास्थ्य से खिलवाड़ कर रहे हैं। अब कोकाकोला कम्पनी कोकाकोला में जो हानिकारक पदार्थ मिलाती रही है, हटा देने को कह रही है। समाचार के अनुसार पेप्सी इसे दो वर्ष पहले हटा चुकी है। ऐसे कामों में हमारे राजनेता या अधिकारी इन कम्पनियों से धन लेकर इन्हें मनमानी करने देते हैं। प्राय: औषधियाँ विदेशों में बनती हैं, भारत में सबसे अधिक बिकती हैं जिनके वे मुँह मांगे दाम लेते हैं। फास्टफूड, पेय पदार्थों से जितने रोग अधिक होंगे उतना दोहरा लाभ उन्हें होगा-फास्डफूड और पेय बेचकर फिर इनसे होने वाले रोगों के लिए औषधियाँ बेचकर।

इसलिए यदि अपना परिवार का जीवन सुखी, शान्त रखना चाहते हैं तो हमें इस ''भूत....फैशन का'' के रूप में खाद्य पेय पदार्थों का सेवन सोच समझ कर ही करना होगा।

भोजन हमारे स्वास्थ्य के लिए उपयोगी हो इसके लिए महर्षि चरक की उक्ति- **हितभुक्, मितभुक्, ऋतभुक्** का नियम पूर्वक पालन करना होगा।

शेष अगले अंक में.....

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

ई-मेल द्वारा परोपकारी नि:शुल्क

परोपकारी के पाठकों को प्रसन्नता होगी कि अब परोपकारी ई-मेल द्वारा भी भेजी जा रही है। परोपकारिणी सभा की वेब-साइट पर तो परोपकारी पहले से ही नि:शुल्क उपलब्ध है। विश्व में कहीं भी कोई भी इसे वेब-साइट पर पढ़ सकता है। इसके साथ ही अब यह सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है कि परोपकारी आपके पास ई-मेल द्वारा पहुँच जाये। इससे यह पत्रिका शीघ्र व अधिक सुन्दर रूप में आप तक पहुँच सकेगी। आप जहां भी रहें, कभी भी पढ़ना चाहें, यह आपके पास रहेगी। डाक की अव्यवस्था से छुटकारा मिल सकेगा। यह आपको नियमित मिलती रहेगी। इससे रासायनिक रंगों व कागज का उपयोग भी कम होगा, खर्च भी घटेगा। अत: पाठकों से अनुरोध है कि **कृपया अपना ई-मेल पता सभा को ई-मेल से भिजवा देवें।** आप जिन इष्ट-मित्रों, परिजनों व संस्थाओं को परोपकारी भिजवाना चाहते हैं, उनके ई-मेल पते भी भिजवा देवें, उन्हें भी यह नि:शुल्क भेज दी जायेगी। ई-मेल- psabhaa@gmail.com

-व्यवस्थापक

आस्था भजन (चैनल) पर आर्य विद्वानों के प्रवचन

स्वामी रामदेव जी जन-जन के कल्याण को ध्यान में रखते हुए वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए 'आस्था-भजन' चैनल पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे तक दो घण्टे के बीच वैदिक विद्वानों के प्रवचनों को प्रसारित करवा रहे हैं।

इस कार्य में परोपकारिणी सभा द्वारा भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है। परोपकारिणी सभा द्वारा प्रवचनों की आपूर्ति के लिए ऋषि उद्यान में रिकॉर्डिंग-यूनिट चल रही है और लगातार नित नये प्रवचनों की रिकॉर्डिंग की जा रही है। परोपकारिणी सभा ये प्रवचन आस्था-भजन (चैनल) को प्रदान कर रही है।

इन दिनों 'आस्था-भजन' (चैनल) पर प्रतिदिन सायं ७ से ७.२० बजे तक **आचार्य धर्मवीर** के वेद-प्रवचन, ७.३० से ७.५० तक **स्वामी विष्वङ्** के योगदर्शन प्रवचन, ८.३० से ८.५० तक **आचार्य सत्यजित्** के उपनिषद् प्रवचन प्रसारित हो रहे हैं। इसी प्रकार आगे भी 'आस्था-भजन' पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे के बीच अन्य विद्वानों के व अन्य विषयों पर प्रवचन प्रसारित होते रहेंगे।

धर्मप्रेमी जन इन प्रवचनों का अधिकाधिक लाभ उठाएँ और अन्यों को भी अधिकाधिक सूचित करें।

'आस्था-भजन' (चैनल) डिश-टी.वी. और डी.टी.एच. पर उपलब्ध है, किन्तु टाटा-स्काई, वीडियोकोन, बिग-टी.वी. आदि पर नहीं आ रहा है। जिनके पास ये नहीं आ रहा है, वे अपने प्रसारक (सर्विस प्रोवाइडर) को बार-बार कह कर प्रेरित करते रहें, जिससे कि ये भी आस्था भजन को प्रसारित करने लगें। ऐसा करके वैदिक-धर्म के प्रचार-प्रसार में आप भी सहयोग प्रदान कर सकते हैं। जो केबल से देखते हैं, वे भी अपने केबल ऑपरेटर को कह कर आस्था भजन आरम्भ करवा सकते हैं।

गुरुकुल सलखिया का संचालक नियुक्त

परोपकारी के गत अङ्कों में गुरुकुल सलखिया के संचालक स्वामी रामानन्द को अनुचित व अनुशासनहीनता पूर्ण गतिविधियों के लिए समस्त दायित्व से मुक्त करने की सूचना सभा द्वारा प्रकाशित की गई थी। इसी मध्य समाचार पत्र एवं दूरभाष द्वारा स्वामी रामानन्द के विरुद्ध गुरुकुल के छात्रों द्वारा उन के साथ यौन शोषण की शिकायत पुलिस में की जाने की सूचना सभा को प्राप्त हुई।

सूचना मिलने पर सभा के कार्यकारी प्रधान एवं मन्त्री गुरुकुल आश्रम सलखिया, छत्तीसगढ़ पहुँचे। घटना की जाँच करने पर ज्ञात हुआ, छात्रों व उनके अभिभावकों द्वारा स्वामी रामानन्द के विरुद्ध लिखित शिकायत दी गई है। इसी के आधार पर पुलिस ने प्रथम सूचना लिखकर कार्यवाही प्रारम्भ कर दी है। साथ ही सरकार के अन्य अनेक विभागों द्वारा भी जाँच की जा रही है। पुलिस में शिकायत होने पर स्वामी रामानन्द गिरफ्तार कर लिया गया।

ऐसी स्थिति में वहाँ के प्रतिष्ठित व्यक्तियों से तथा गुरुकुल समिति के सदस्यों से विचार विमर्श करके सभा के द्वारा स्वामी रामानन्द के स्थान पर श्री जोगीराम आर्य को संस्था के प्रबन्ध का दायित्व सौंपा गया है तथा अगले आदेश तक संस्था के समस्त प्रबन्ध कार्य करने के लिए अधिकृत किया है।

- मन्त्री, परोकारिणी सभा, अजमेर

वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत

वेदभाष्य, वेदभाषाभाष्य, मूलवेद, वेदांगप्रकाश और वैदिक साहित्य

पिछले अंक का शेष भाग.....

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
८८.	सौवर	५.००
८९.	पारिभाषिक	२०.००
९०.	धातुपाठ	
९१.	गणपाठ	२०.००
९२.	उणादिकोष	
९३.	निघण्टु	१५.००
९४.	संस्कृतवाक्यप्रबोध	
९५.	व्यवहारभानुः	१२.००
९६.	निरुक्त (मूल)	८०.००
९७.	अष्टाध्यायी (मूल)	२०.००
९८.	अष्टाध्यायीभाष्य प्रथम भाग सजिल्द	१२०.००
९९.	अष्टाध्यायी भाष्य द्वितीय भाग सजिल्द	१००.००
१००.	अष्टाध्यायी भाष्य तृतीय भाग सजिल्द	१३०.००

डॉ. भवानीलाल भारतीय

१०१.	महर्षि दयानन्द– आत्मकथा	
१०२.	उपदेश मंजरी (पूना प्रवचन)	
१०३.	परोपकारिणी सभा का इतिहास	
१०४.	आर्यसमाज के पत्र और पत्रकार	१०.००
१०५.	आर्य नरेश राजाधिराज सर नाहरसिंह वर्मा	८.००
१०६.	दयानन्द–सूक्ति–मुक्तावली	१५.००
१०७.	देशभक्त कुँ.चाँदकरण शारदा	५.००
१०८.	दयानन्द वचनामृत	३.००
१०९.	आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी	१०.००

वेदगोष्ठी– सम्पादक डॉ. धर्मवीर

११०.	ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली	२०.००
१११.	वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग	३१.००
११२.	अथर्ववेदः समस्याएं और समाधान	३५.००
११३.	वेद और विदेशी विद्वान् – कृतित्व और दृष्टिभेद	३५.००
११४.	वेदों के आख्यान (प्रथम भाग)	३५.००
११५.	वेदों के दार्शनिक विचार	४०.००
११६.	सोम का वैदिक स्वरुप	५०.००
११७.	पर्यावरण का वैदिक स्वरुप	
११८.	वेद और समाज	
११९.	वेद और राष्ट्र	
१२०.	वेद और विज्ञान	
१२१.	वेद और ज्योतिष	८०.००
१२२.	वेदों में पदार्थ विद्या (विशेषांक–१)	५०.००
१२३.	वेदों में पदार्थ विद्या (विशेषांक–२)	५०.००
१२४.	वेद और निरुक्त	१००.००
१२५.	वेद और इतिहास	१००.००
१२६.	वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	१००.००
१२७.	वेद और शिल्प	
१२८.	वेदों में अध्यात्म	
१२९.	वेदों में राजनैतिक विचार	१००.००
१३०.	वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है	
१३१.	वैदिक समाज विज्ञान	
१३२.	सत्यार्थ प्रकाश ७वाँ समुल्लास और वेद	
१३३.	सत्यार्थ प्रकाश ८वाँ समुल्लास और वेद	

प्रो. धर्मवीर

१३४.	आर्यसमाज और शोध	१५.००
१३५.	महर्षि दयानन्द सरस्वती के पत्र	

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
	स्वामी विष्वङ् परिव्राजक	
१३६.	ध्यान योग एवं रोग निवारण	१५०.००
१३७.	योग	५०.००
१३८.	अष्टाङ्ग योग	२०.००
१३९.	समाधि	१००.००
	स्वामी अभयानन्द सरस्वती	
१४०.	प्राणायाम चिकित्सा	
	डॉ. सत्यदेव आर्य	
१४१.	वैदिक सन्ध्या मीमांसा	२५.००
१४२.	ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना मन्त्रों का विवेचन	२५.००
१४३.	तन्मेमनःशिवसंकल्पमस्तु का वैज्ञानिक विवेचन	२५.००
	विरजानन्द दैवकरणि	
१४४.	प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोत	८.००
१४५.	महाभारत युद्ध कब हुआ एवं अन्य रचनाएँ	५.००
	वैद्य पंडित ब्रह्मानन्द त्रिपाठी	
१४६.	बूंदी शास्त्रार्थ	५.००
१४७.	वैदिक सूक्ति–सुमन	२५.००
	वैदिक साहित्य – विविध ग्रन्थ	
१४८.	दयानन्द ग्रन्थमाला तीन खंड का १ सेट	५५०.००
१४९.	आर्य समाज की मान्यताएं	२०.००
१५०.	मानव निर्माण के स्वर्ण सूत्र	१५.००
१५१.	अथर्ववेदीय पञ्चपटलिका (सजिल्द)	२५.००
१५२.	अथर्ववेदीय पञ्चपटलिका अजिल्द	१५.००
१५३.	ऋग्वेद का नमूना भाष्य (१मंत्र)	४.००
१५४.	ईशादिदशोपनिषद् (मूल)	१०.००
१५५.	वैदिक कोषः (निघण्टु मणिमाला)	२५.००
१५६.	सरस्वती की खोज एवं महाभारत युद्धकाल	१०.००
१५७.	दयानन्द दिव्य दर्शन	१२.००
१५८.	वृक्षों में जीवात्मा	१०.००

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
१५९.	महर्षि दयानन्द जीवन और सन्देश	३.००
१६०.	महर्षि महिमा	२.००
१६१.	स्वामी दयानन्द चरितम्	१०.००
१६२.	ब्रह्माकुमारी मत खण्डन	८.००
१६३.	निरुक्तकार का ऐतिहासिक पक्ष	५.००
१६४.	मांसाहार– वैदिक धर्म एवं विज्ञान	१२.००
१६५.	नेपाली सत्यार्थ प्रकाश	२००.००
१६६.	परोपकारी विशेषांक	२५.००
१६७.	महर्षि दयानन्द के चित्र (एक प्रति)	५०.००
१६८.	संगठन सूक्त	२.००
१६९.	३१ दिवसीय टेबल कलेण्डर	१००.००
१७०.	प्यारा ऋषि	२५.००
१७१.	नककटा चोर	३०.००
१७२.	महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायी	३५.००
१७३.	स्वामी दयानन्द सरस्वती और उनके क्रान्तिकारी शिष्य	३५.००
१७४.	भगवान् को क्यों मानें ?	२५.००
१७५.	महर्षि दयानन्द ग्रन्थ परिचय	३०.००
१७६.	आर्यसमाज के संस्थापक, महान समाज सुधारक–महर्षि दयानन्द सरस्वती	२५.००
१७७.	शेख चिल्ली और लाल बुझक्कड़	२५.००
१७८.	नैति मंजूषा	९५०.००
१७९.	ऋग्वेदादि संदेश	३०.००
१८०.	त्याग की धरोहर	१००.००
	ध्यान योग एवं रोग निवारण (सी.डी.)	
	(स्वामी विष्वङ् परिव्राजक)	
१८१.	अष्टांग योग–१ (सी.डी.)	
१८२.	अष्टांग योग–२ (सी.डी.)	
१८३.	आसन (सी.डी.)	
१८४.	सूक्ष्म व्यायाम (सी.डी.)	

शेष भाग अगले अंक में.....

जिज्ञासा समाधान – ६५

– आचार्य सोमदेव

जिज्ञासा-१. सेवा में मान्यवर स्वामी विष्वङ् जी सादर नमस्ते।

अ. परोपकारी अक्टूबर द्वितीय २०१३ पृष्ठ ७ पर आपका लेख पढ़ा। आपने लिखा 'स्वतन्त्र व्यक्ति अपनी स्वतन्त्रता से अन्यों को सुख भी दे सकता है और दु:ख भी दे सकता है।' यह सम्भव प्रतीत नहीं होता, क्योंकि सुख-दु:ख जो भोग हैं वह कर्मों के फल हैं। हम कर्म करने में तो स्वतन्त्र हैं। फल तो ईश्वर आधीन है। हम चाहते हुए भी किसी को सुख वा दु:ख नहीं दे पाते, यह प्रत्यक्ष प्रमाण है।

ब. आगे लिखा 'अन्य के द्वारा किये जाने वाले कर्मों से हमें सुख-दु:ख मिलता है, तो वह सुख-दु:ख हमारे लिये परिणाम और प्रभाव तो हो सकते हैं। परन्तु हमारे कर्मों का फल नहीं है।' वैदिक मान्यता है कि अन्य के कर्म का फल अन्य को नहीं मिलता। यहाँ आपत्ति यह है कि कर्म तो दूसरे ने किया और फल हमें मिला। जब वह फल हमारे कर्म का है ही नहीं। यहाँ बिना कर्म के फल माना गया, जो सम्भव नहीं। वेदों के अनुसार ऋषि दयानन्द जी की मान्यता है कि जीवात्मा कर्म करने में स्वतन्त्र है किन्तु सुख वा दु:ख रूप फल भोगने में परतन्त्र है। आपने परिणाम और प्रभाव को सुख-दु:ख से अलग माना है, वे भी तो कर्म का ही फल होते हैं, जो दूसरे व्यक्ति के कर्म से हमें भुगतने पड़ रहे हैं। जो ईश्वर की अनुमति के बिना हमें नहीं मिल सकते। ईश्वर सब व्यवहारों में व्याप्त है, हमारा रक्षक है, उसने हमारी रक्षा क्यों नहीं की। जब कि हमारे कर्म का भोग ही नहीं था। कृपया मेरी शंका का समाधान करें।

– श्री वीरसेन सुपुत्र श्री लालचन्द आर्य, कार्यालय एक्स.इ.एन.एम. एण्ड पो. वीजन, पुराना बिजली घर, रोहतक, हरियाणा

समाधान- आपकी परोपकारी अक्टुबर द्वितीय २०१३ के अंक में आये 'आध्यात्मिक चिन्तन के क्षण' में लिखे कर्मफल व्यवस्था पर आपत्ति व जिज्ञासा है। आपके लेख से ऐसा प्रतीत हो रहा है कि आपकी मान्यताएँ इस प्रकार की हैं- १. हमारा जो भी सुख-दु:ख रूप योग है, वह सब हमारे कर्मों का फल है। २. हम चाह कर भी किसी को सुख-दु:ख नहीं दे सकते। ३. कर्मों का फल ही होता है, परिणाम व प्रभाव नहीं होता अथवा परिणाम व प्रभाव भी फल ही हैं। ४. आपका प्रश्न है कि ईश्वर सर्वरक्षक होते हुए भी परिणाम व प्रभाव से जिनको बिना कर्म के दु:ख मिलता है उनकी रक्षा क्यों नहीं करता?

इन सभी बातों पर क्रमश: विचार करते हैं- प्रथम तो ये कि जो हमें सुख-दु:ख होता है, वह हमारे कर्मों का फल होता है। किन्तु सभी सुख-दु:ख हमारे कर्मों का फल नहीं है। हमारे अपने अज्ञान से भी हम बिना कर्मों के सुखी-दु:खी होते रहते हैं। अन्य कोई हमारे बिना कर्मों के न्याय-अन्याय पूर्वक सुख-दु:ख दे सकता है, देता है। क्योंकि जीवात्मा कर्म करने में स्वतन्त्र है, जिसको आप भी मानते हैं और ये जो आपने कहा कि ''हम चाहते हुए भी किसी को सुख-दु:ख नहीं दे सकते, इसमें प्रत्यक्ष प्रमाण है।'' यह कथन प्रत्यक्ष व सिद्धान्त के विपरीत है।

हम प्राय: प्रत्येक दिन देखते हैं कि कोई किसी को सुख दे रहा है और कोई दु:ख दे रहा है। इसी आधार पर व्यक्ति प्रेम व द्वेष करता है। किसी को (सुख देने वाले को) सम्मान से विभूषित करता है तो किसी को (दु:ख देने वाले को) दण्ड से दण्डित करता है, लोक में प्रत्यक्ष तो यह देखा जाता है।

जो हम से चेष्टा विशेष=कर्म विशेष होता है, वह सब हमारी इच्छा से, चाह से होता है। शास्त्र में आत्मा का एक गुण इच्छा भी लिखा हुआ है। यदि इच्छा नहीं है तो हम से कर्म विशेष भी नहीं होगा। अब देखिये जब कोई व्यक्ति किसी की सहायता करता है तब उस सहायता से सहायता लेने वाले को सुख मिलता है। इस सुख का मिलना किसकी इच्छा से कहेंगे, सहायता करने वाले की इच्छा से वा परमेश्वर की इच्छा से। ऐसा ही दु:ख के विषय में कि कोई आतंकवादी किन्हीं लोगों को बन्दी बनाकर यातनाएँ देता है, उससे जो दु:ख होता है, वह किसकी इच्छा से होता है। आतंकवादी की या परमात्मा की? यहाँ मानना पड़ेगा, माना जाता है कि जो इस प्रकार का सुख-दु:ख मिला वह किसी व्यक्ति विशेष की इच्छा से मिला है न कि परमेश्वर की इच्छा से।

यदि आपकी मान्यता के अनुसार यह माना जाये कि सब सुख-दु:ख हमारे कर्मों का ही फल है, तो जो हमारी सहायता करने वाला है, उसको धन्यवाद करने, उसका उपकार मानने वा उसका सम्मान करने की भी आवश्यकता नहीं है। यह नहीं करना चाहिए। क्योंकि सहायता का मिलना, उससे सुख का

होना, यह सब हमारे कर्मों का फल है और यह ईश्वर ने हमें दिया है। सहायता करने वाले का इसमें कोई लेना-देना नहीं। इसी प्रकार आतंकवादी के द्वारा यातनाएँ देने पर, दु:ख देने पर उसको दण्ड भी नहीं देना चाहिए। क्योंकि उसके द्वारा जो दु:ख मिला है, वह तो कर्मों का फल है। इसमें आतंकवादी का दोष कहाँ है? आपकी मान्यतानुसार सहायता करने वाले का उपकार कर्म और आतंकवादी का दोषयुक्त कर्म नहीं होता, यह भी मानना पड़ेगा, जो कि ठीक नहीं है।

एक और भी- ऐसा मानने पर जीवात्मा की स्वतन्त्रता वाला सिद्धान्त खण्डित हो जायेगा। क्योंकि जो कोई किसी को सुख-दु:ख दे रहा वह अपनी इच्छा से, स्वतन्त्रता से नहीं दे रहा, वह परमेश्वर से बन्धित होकर, परमेश्वर की इच्छा से दे रहा है। आपकी मान्यता मानने पर सुख देने वाले को पुण्य और दु:ख देने वाले को पाप भी नहीं होगा, नहीं होना चाहिए और जो वेद में परमात्मा ने व वेद को मानने वाले ऋषियों ने हम मनुष्यों के लिए उपदेश किया कि कोई किसी को दु:ख न दे सुख ही देवे, यह भी व्यर्थ हो जायेगा। सरकार द्वारा नियम बनाने की भी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि जिसको जिस किसी के द्वारा जो सुख-दु:ख मिलना है, वह तो मिलेगा ही चाहे नियम बनावें या न बनावें। इत्यादि बहुत सी गलत बातों को मानना पड़ेगा।

एक ओर आत्मा को स्वतन्त्र मानना और दूसरी ओर यह कहना कि कोई किसी को चाह कर भी सुख-दु:ख नहीं दे सकता। ये दोनों बातें परस्पर विरुद्ध हैं। यदि स्वतन्त्र है तो वह अपनी इच्छा से किसी को सुख-दु:ख दे सकता है। और यदि अपनी इच्छा से सुख-दु:ख नहीं दे सकता तो वह स्वतन्त्र नहीं।

आप कर्म के फल को ही मान रहे हैं सो ठीक नहीं है। कर्म फल, परिणाम व प्रभाव में तीनों होते हैं। कर्म का फल तो निश्चित रूप से कर्म को करने वाले को ही मिलेगा, मिलता है। किन्तु कर्म का परिणाम व प्रभाव अन्यों को भी हो सकता है, होता है। कर्म का फल निश्चित मात्रा में होता है, परिणाम व प्रभाव न्युनाधिक हो सकता है।

इन तीनों को एक उदाहरण से समझें- जैसे किसी ने किसी सज्जन पुरुष की हानि कर दी। इस हानि रूप कर्म का फल इसी हानि करने वाले को ही मिलेगा अन्य को नहीं। इसको जो दु:ख रूप भोग मिलेगा वह उस कर्म का फल होगा। यहाँ यह आपत्ति भी नहीं रहती कि कर्म कोई करे और फल कोई भोगे। हानि करने रूप कर्म से जिस सज्जन पुरुष की जो हानि हुई है वह इस कर्म का परिणाम है। और जो इस सज्जन पुरुष से प्रेम वा द्वेष करते थे, उनको इस हानि को देखकर सुख वा दु:ख का होना यह प्रभाव है। ये परिणाम और प्रभाव कर्म का फल नहीं हैं, कर्म का फल इनसे पृथक् होता है। यदि इनको भी कर्म का फल मानते हैं तो पूर्वोक्त गलत बातों को भी मानना पड़ेगा जो कि सिद्धान्त विरुद्ध हैं।

अब रही बात हमारे बिना कर्म के अन्य के द्वारा किये कर्म से परिणाम व प्रभाव से मिले दु:ख में ईश्वर हमारी रक्षा क्यों नहीं करता? इसका उत्तर है, ईश्वर रक्षा करता है, किन्तु जैसे कुछ लोग सोचते हैं वैसे रक्षा नहीं करता। उसकी रक्षा करने की शैली न्याययुक्त कि जीवों के कर्म करने की स्वतन्त्रता भी बनी रहे और रक्षा भी हो जाये। ईश्वर न्यायकारी है, उसके न्यायकारी होने से, जिस जीवात्मा को दूसरे के किये कर्म से अन्याय पूर्वक दु:ख मिला है, उसकी क्षतिपूर्ति इस जन्म वा अगले जन्म में परमेश्वर करता है, करेगा और जिसने अन्याय किया है, उसको यथायोग्य दण्ड देता है, यह उसकी रक्षा है। वेदों में हमे उपदेश किया है यह उपदेश उस परमेश्वर की रक्षा है। बुरे काम करने वाले आत्मा में लज्जा, भय, शंका पैदा करना ये सब उसकी रक्षा है, उसके द्वारा रक्षा करना।

इसलिए जो परोपकारी अक्टूबर द्वितीय २०१३ के पृष्ठ ७ पर कर्म फल विषय में लिखा गया है, वह सिद्धान्तानुकूल होने से ठीक लिखा गया है।

इस विषय में अधिक जानकारी के लिये श्रद्धेय आचार्य सत्यजित् जी द्वारा लिखे जिज्ञासा समाधान परोपकारी अक्टूबर द्वितीय २०११ से जनवरी प्रथम २०१२ के लेख पढ़ें।

जिज्ञासा-२. आदरणीय आचार्यवर, सादर नमस्ते।

निवेदन है कि वैदिक सन्ध्या के अन्त में यह मन्त्र है-

ओं नम: सम्भवाय च। मयोभवाय च। नम: शंकराय च। मयस्कराय च। नम: शिवाय च। शिवतराय च।

शिव का अर्थ कल्याणकारी है। नम: शिवाय से काम चल सकता है, शिवतर तक क्यों पहुँचे? यदि कहें कि शिवतर शिव की तुलना में अधिक कल्याणकारी है, इसीलिए शिवतर शब्द का प्रयोग किया है तो प्रश्न है कि तीसरी अवस्था (=तीसरी डिग्री) अन्तिम है। उसके आगे, जिससे बड़ी डिग्री नहीं है तथा वह शिवतम है। इस मन्त्र में शिवतमाय का प्रयोग क्यों नहीं? शिवतराय के आगे शिवतमाय इस मन्त्र में हो तो स्पष्ट होगा कि ईश सबसे बड़ा कल्याणकारी है।

- इन्द्रजित् देव, चूनियाँ भट्टी, यमुनानगर,

समाधान- आपकी जिज्ञासा नमस्कार मन्त्र में आये 'शिवाय' व 'शिवतराय' पदों पर है। इनमें भी मुख्य रूप से 'शिवतराय' पर है। शिव का अर्थ कल्याणकारी है अर्थात्

ईश्वर कल्याण करने वाला है। परमेश्वर के अन्दर जितना कल्याण रूपी गुण है वह सब इस शिव शब्द के अर्थ से ही आ रहा है। ये होते हुए भी मन्त्र में 'शिवतराय' पद पढ़ा है, जिसका अर्थ है अत्यधिक कल्याणकारी के लिए, आपकी जिज्ञासा यही पर है कि परमेश्वर को कल्याणकारी बताने के लिए 'शिव' शब्द से ही काम चल रहा है फिर 'शिवतर' तक क्यों पहुँचे। और अधिकता ही दिखानी थी तो शिवतर न कहकर शिवतम कहना चाहिए क्योंकि शिवतम, शिवतर से अधिक श्रेष्ठ अर्थ में है।

अब इस सब का समाधान करते हैं कि जो मन्त्र में शिवतर (शिवतराय) पढ़ा है वह युक्ति युक्त व संगत है। इसको समझने के लिए हम 'शिवतर' व 'शिवतम' इन दोनों शब्दों के ऊपर विचार कर लेते हैं इनमें क्या प्रत्यय हैं, ये प्रत्यय किस अर्थ व प्रसंग में होते हैं? इन दोनों शब्दों में क्रमशः तरप् प्रत्यय पाणिनीय अष्टाध्याय के सूत्र **द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ।** अ. ५.३.५७ और तमप् प्रत्यय **अतिशायने तमबिष्ठनौ।** अ. ५.३.५५ से हुए हैं। ये दोनों प्रत्यय एक ही अर्थ अर्थात् अतिशय, अत्यन्त प्रकर्ष, अत्यधिक श्रेष्ठ अर्थ में होते हैं। इस प्रकार शिवतर और शिवतम दोनों का एक ही अर्थ बनेगा अत्यधिक कल्याणकारी। हाँ इन दोनों प्रत्ययों के अर्थ एक होते हुए प्रसंग अलग-अलग हैं। तरप् प्रत्यय जब दो वस्तुओं में तुलना करनी हो अर्थात् किन्हीं दो वस्तु में कौनसी एक अधिक प्रकर्ष वाली है, तब होता है। तमप् प्रत्यय दो से अधिक वस्तुओं में तुलना करनी हो तब होता है अर्थात् बहुत सी वस्तुओं में से कौनसी एक वस्तु सबसे अधिक प्रकर्षता वाली है, इसको बताने के लिए 'तमप्' प्रत्यय का प्रयोग होता है।

इस आधार पर आपका समाधान बनता है कि वैदिक सिद्धान्त त्रैतवाद पर टिका है। आत्मा, परमात्मा, प्रकृति ये तीन ही मूल तत्त्व हैं। इन तीनों में आत्मा, दो से अपना प्रयोजन पूरा करता है। अर्थात् आत्मा के सामने परमात्मा व प्रकृति ये दो हैं। इन दोनों में से आत्मा किसको अधिक श्रेष्ठ माने तो अभी ऊपर हमने व्याकरण की दृष्टि से देखा कि दो में तुलना करनी हो तो तरप् प्रत्यय होता है। और मन्त्र में भी तरप् युक्त शिवतर शब्द है।

अज्ञानी आत्मा प्रकृति का सुख लेते हुए इसी को अपना कल्याणकारी समझने लगता है। ऐसी स्थिति में वेद मन्त्र ने संकेत दिया कि प्रकृति से अधिक शिवतर परमेश्वर है। इसलिए 'नमः शिवतराय' मन्त्र में कहा अथवा ज्ञानी आत्मा, प्रकृति व परमात्मा में जब तुलना करता है तब परमेश्वर को शिवतर देखता है। इसलिए वह 'नमः शिवतराय' कहता है।

यहाँ यदि प्रकृति से अतिरिक्त अन्यों के साथ (बहुतों के साथ) भी परमात्मा की तुलना हो रही होती तो शिवतमाय हो सकता था। परन्तु प्रकृति के अतिरिक्त और कोई सुखदायी पदार्थ नहीं है। आत्मा को सुख चाहिए और सुख देने वाले पदार्थ दो (प्रकृति व परमात्मा) ही हैं।

जिज्ञासा-३. श्री सोमदेव जी! सप्रेम नमस्ते। आश्रमस्थ सभी जनों को नमन।

आशा है सानन्द है। आपके प्रगतिमान- उज्ज्वल भविष्य की कामना। आचार्य जी! 'जिज्ञासा-समाधान' में आपके समाधान पढ़ता रहता हूँ। इससे आपके गहन अध्ययन का पता चल जाता है, आपसे रोहतक ही से मुझे आत्मीयता है। मैं आपके ग्राम में भी (सत्यव्रत जी के साथ) गया था। खैर....। आर्य प्रवर! प्रायः उपदेशक जन एक श्लोकार्ध- '**अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाऽशुभम्.**' वक्तव्यों में सुनाया करते हैं- इसका पता एवं पूरा श्लोक देने की कृपा करेंगे- मुझे अभी तक इसका पता नहीं मिला है। 'परोपकारी' में भी और एक अलग से पोस्ट कार्ड में भी दे दें। तदर्थ साधुवाद।

- स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती 'वेदभिक्षु',
आर्यसमाज बिहारीपुर, बरेली-२४३००३ (उ.प्र.)

समाधान- आदरणीय स्वामी जी आशीर्वाद के लिए आपको बहुत सा धन्यवाद। आपने जो श्लोक पूछा है वह ब्रह्मवैवर्त पुराण का है। पूरा श्लोक यह है-

नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि।
अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।।

ब्रह्म वै. प्रकृति. ३७.१६

उपदेशक वर्ग और भी श्लोकांश बोलते रहते हैं कदाचित् आपको उनका ज्ञान होगा। फिर भी हम यहाँ अन्य पाठकों की दृष्टि से वे पूरे श्लोक व उनका पता लिखते हैं।

बन्धाय विषयाऽसक्तं मुक्त्यै निर्विषयं मनः।
मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।।

यह चाणक्य नीति के १३वें अध्याय का ११वाँ श्लोक है। यही श्लोक पंक्ति विपर्यय से मैत्रायण्युपनिषद् (६.३४) में भी मिलता है।

गावो वितन्वते यज्ञं, गावो विश्वस्य मातरः।
शकृन्मूत्रं पयोऽमृतं, अलक्ष्म्याः तापनं परम्।।

३.४२.२

यह श्लोक विष्णु पुराण के परिशिष्ट विष्णु धर्मोत्तर पुराण का है। अस्तु।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

वैशेषिक-दर्शन का अध्यापन

महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान, में अध्ययन-अध्यापन का कार्य सुचारू रूप से चल रहा है। उसी क्रम में वैशेषिक दर्शन **(स्वामी ब्रह्ममुनि भाष्य सहित)** का **स्वामी विष्वङ् परिव्राजक** द्वारा श्रावण कृष्ण चतुर्थी २०७१ वि. (तदनुसार १५ जुलाई २०१४ ई.) से विधिवत् नियमित सम्पूर्ण अध्यापन कराया जायेगा।

वैशेषिक दर्शन महर्षि कणाद के द्वारा रचित ग्रन्थ है जो कि दस अध्यायों में विभक्त है। प्रत्येक अध्याय में दो आह्निक हैं। इस दर्शन का विषय द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, इन छह पदार्थों के धर्म के तत्त्वज्ञान से अभ्युदय और निःश्रेयस की प्राप्ति कहा है। यह द्रव्य के गुण, कर्मादि के लक्षण सहित किसी कार्य द्रव्य के कारणों का विशद् विवेचन प्रस्तुत करता है।

यह दर्शन ५-६ महिनों में पूर्ण होगा।

इस काल में प्रातः व सायं उपदेश भी सुनने को मिलेगा। बीच-बीच में विभिन्न विद्वानों द्वारा अन्य विविध विषयों पर भी कक्षा एवं उपदेश होते रहेंगे। ब्रह्मचारियों, संन्यासियों व अन्य असमर्थों हेतु निवास व भोजन व्यवस्था निःशुल्क है। समर्थ प्रतिभागी इच्छानुसार सहयोग कर सकते हैं। माताओं-बहनों के लिए निवास की पृथक् व्यवस्था रहेगी। **सम्पर्क**-९४१४००३७५६ (स्वामी विष्वङ्) **सायं ५.३० से ६.००**। **पता**-ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर-३०५००१ (राज.), ईमेल-psabhaa@gmail.com

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग एक वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक खाता संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।

बैंक खाता संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

नवीन प्रकाशन का परिचय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित वैदिक पुस्तकालय के द्वारा प्रेरणास्पद व भक्त्योत्पादक **कैलेण्डरों** व **स्टीकरों** का नवीन प्रकाशन किया गया है।

कैलेण्डर - (क) महर्षि दयानन्द की शिक्षाएँ- इसमें महर्षि दयानन्द जी द्वारा रचित धार्मिक-व्यवहार से लेकर ईश्वर-भक्ति तक ले जाने वाले प्रेरक-वाक्यों का संग्रह किया गया है।

(ख) सन्ध्या सुरभि- इसमें महर्षि दयानन्द जी की भक्त्योपादक वाक्य-रचना का आधार लेकर वैदिक सन्ध्या के भावों को सुरभित किया गया है।

(ग) गायत्री मन्त्र- इसमें गायत्री मन्त्र के अनेक विशेष अर्थों के द्वारा ईश्वर के गुणों के प्रति प्रेरित किया गया है। साथ में मन्त्र का भाव कविता रस में भी बाँधा गया है।

स्टीकर- इसमें परमात्मा के मुख्य नाम **ओ३म्** व महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के चित्र को विशेषतः प्रकाशित किया गया है।

सभी आर्यजनों को ये नवीन प्रकाशन अवश्य ही लाभदायक सिद्ध होंगे।

संस्था - समाचार

१६ से ३० मई २०१४

१. यज्ञ एवं प्रवचन- ईश्वर की कृपा से तथा सभा कार्यकर्त्ताओं के सहयोग व पुरुषार्थ से ऋषि उद्यान परिसर में विगत दिनों भी दोनों समय अग्निहोत्र व प्रवचन-स्वाध्याय का क्रम निर्विघ्नता से चलता रहा।

इसके अन्तर्गत प्रातः यज्ञोपरान्त प्रवचन के क्रम में १६ मई को स्वामी विष्वङ् जी ने रविवारीय प्रवचन के क्रम में **यदङ्ग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि। तवेत्तत्सत्यमङ्गिरः** (ऋ. १/१/६) मन्त्र की व्याख्या प्रस्तुत की। आपने बताया कि यहाँ परमेश्वर को अङ्ग=सर्वमित्र कहा गया अर्थात् जिस प्रकार एक मित्र अपने मित्र की उन्नति चाहता है, उसी प्रकार (उससे भी अधिक उत्कृष्ट रूप में) परमेश्वर भी सदा ही हमारी उन्नति चाहता है। वह अग्निस्वरूप, मित्रस्वरूप परमात्मा- **दाशुषे भद्रं करिष्यसि** (दाशुषे) सब कुछ त्याग करने वाले के लिए, (भद्रं) शिष्ट/बुद्धिमानों/विद्वानों द्वारा चाहे गए कल्याणकारी पदार्थों को (करिष्यसि) प्रदान करता है। और **'तत् इत् तव सत्यम्'** यह उस परमात्मा का स्वभाव ही है इसमें आश्चर्य वाली कोई बात नहीं। स्वामी जी ने बताया कि यहाँ जीवात्मा को 'दाशुषे'= सब कुछ त्याग करने वाला कहा गया है। कोई भी दो व्यक्ति चाहे वे माता-पिता-पुत्र-पुत्री आदि कोई भी सम्बन्ध क्यों न रखते हों, वे परस्पर एक दूसरे को अपना सर्वस्व नहीं दे सकते। जीवात्मा के सर्वस्व दान की स्थिति केवल परमात्मा के सम्बन्ध में ही बनती है। जहाँ लोक में कोई व्यक्ति-दूसरे को भौतिक रूप से ही पदार्थ देता है/दे सकता है, वही परमात्मा के प्रति सर्वस्व त्याग मानसिक/बौद्धिक स्तर पर ही किया जाता है। जहाँ लोक में किसी पदार्थ का दान देने पर वह पदार्थ हमारे पास से सामने वाले के पास चला जाता है, वही ईश्वर को समर्पित करने पर वह पदार्थ रहता तो हमारे पास ही है, और उसका प्रयोग भी हम ही करते हैं केवल प्रयोग करने की दृष्टि बदल जाती है। इसे एक लौकिक उदाहरण के माध्यम से समझाते हुए आपने बताया कि जिस प्रकार कोई सज्जन व्यक्ति, अपने किसी परिचित की गाड़ी प्रयोग के लिए लेता है, तो वह उसे अत्यन्त सम्भालकर आदर्श स्थिति में जैसे प्रयोग किया जाना चाहिए वैसे प्रयोग करता है, ठीक उसी प्रकार जो व्यक्ति परमात्मा के प्रति सभी पदार्थों को समर्पित कर, परमात्मा की आज्ञा-अनुसार इनका प्रयोग करता है, उसके लिए वह मित्रस्वरूप परमात्मा भद्र को प्रदान करता है।

पुनः १७ से २६ मई २०१४ के मध्य योगदर्शन की व्याख्या क्रम में आपने बताया कि मन में जो भी विचार आता है, उसे योग की भाषा में 'वृत्ति' कहा जाता है। मन की वृत्तियाँ अनन्त हैं। लेकिन इन वृत्तियों को प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति इन पाँच प्रकारों में बाँटा जा सकता है। ये पाँचों वृत्तियाँ हमारे लिए क्लिष्ट (दुःख देने वाली) और अक्लिष्ट (सुख देने वाली) दोनों प्रकार की हो सकती हैं। विगत दिनों आपके द्वारा प्रमाण वृत्ति को उसके तीनों उपभेदों सहित विस्तार से समझाया जा चुका है। अतः आगे विपर्यय वृत्ति की चर्चा में महर्षि पतञ्जलि के सूत्र- **विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम्** की व्याख्या करते हुए आपने बताया कि विपर्यय= मिथ्याज्ञान अर्थात् जो पदार्थ जैसा है, उसे उसके यथार्थ रूप में न जानकर अन्यथा समझना जैसे रात में रस्सी को देखकर साँप समझ लेना या सीप को चाँदी समझना। महर्षि वेद व्यास के मतानुसार विपर्यय=मिथ्याज्ञान=अविद्या को पाँच प्रकारों में बाँटा जा सकता है- अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष व अभिनिवेश, इन्हें क्रमशः तम, मोह, महामोह, तामिस्र और अन्धतामिस्र, इन नामों से भी पुकारा जाता है। अनित्य पदार्थों को नित्य मानना, अशुद्ध पदार्थों को शुद्ध मानना आदि-आदि अविद्या है। अविद्या के एक स्वरूप को लौकिक उदाहरण से समझाते हुए स्वामी विष्वङ् जी ने बताया कि जैसे कोई माँ अपने २-३ माह के बच्चे के साथ एक ऐसे स्थान में फंस जाए जहाँ उसे शौचालय की सुविधा किसी भी प्रकार से प्राप्त नहीं हो सकती। बच्चा जब भी शौच करे, माँ उसे एक पात्र में कराती जाए और उस पात्र को ढक कर सुन्दर रंगीन आवरण से उपहार (गिफ्ट) की तरह सजा दें। जब उस महिला से कोई परिचित मिलने आए तो उस डिब्बे की तरफ आकर्षित हो जाए और कहे कि बहुत सुन्दर उपहार है। लेकिन वह महिला/माँ ही जानती है कि इसकी वास्तविकता क्या है? ठीक इसी प्रकार अविद्या से ग्रसित व्यक्ति भी अशुद्ध पदार्थों के प्रति शुद्धत्व की भावना, दुःखदायी पदार्थों के प्रति सुखदायी होने की भावना कर लेता है।

अपने प्रवचन के क्रम में डॉ. धर्मवीर जी ने शिवसंकल्प

मन्त्रों की सरल व्याख्या प्रस्तुत की। इस क्रम में आपने बताया कि परमात्मा की वाणी वेदों को हमारे जीवन से जोड़ने के लिए ऋषियों ने कई उपाय अपनाएँ जैसे उसे हर संस्कार के साथ जोड़ दिया गया। यथा जातकर्म संस्कार के समय नवजात बालक को भी कानों में 'वेदोऽसि' बोलकर उसकी जिह्वा पर ओ३म् लिखकर ये शिक्षा दी जाती है कि तुम्हें आगे जीवन में वेद ही सुनना है और परमात्मा विषयक ही बोलना है। हमारे यहाँ केवल संस्कारों में ही नहीं दिनचर्या में भी प्रत्येक कार्य करते समय यथा सोते-उठते, नहाते, खाते समय भी वेदमन्त्रों के माध्यम से प्रार्थना की जाती है। इस प्रकार वेद की महत्ता समझी जा सकती है। यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य है कि प्रार्थना पुरुषार्थ पूर्वक होती है। जब किसान अच्छी फसल होने की प्रार्थना करता है तो यह प्रार्थना खेत जोतने से प्रारम्भ होती है अर्थात् किसी कार्य की सिद्धी के लिए पूर्ण पुरुषार्थ करने के बाद ही प्रार्थना सिद्ध होती है। पुनः आपने मन के कार्यों, स्वभाव को समझाते हुए तीनों शरीर (स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर व कारण शरीर), चारों अवस्थाओं (स्वप्न, जागृत, सुषुप्ति व तुरीय) आदि की उपनिषद् आदि के प्रसंग से व्याख्या की।

सायंकालीन प्रवचन के क्रम में १६ से २२ मई के मध्य महर्षि दयानन्द के क्रान्तिकारी दार्शनिक ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश का स्वाध्याय किया गया। जिसमें आचार्य कर्मवीर जी दर्शनाचार्य ने सत्यार्थप्रकाश की पंक्तियों को बड़े सरल व सूक्ष्म रूप में समझाया और साथ ही विद्यार्थियों के मन में उठने वाली जिज्ञासाओं का तर्क व प्रमाणों से समाधान भी किया। आपने तृतीय समुल्लास में पठन-पाठन विधि के प्रसंग की व्याख्या करते हुए बताया कि महर्षि ने यहाँ जो पठन-पाठन का क्रम बताया है, उसमें ऋषि कृत ग्रन्थों को पढ़कर व्यक्ति थोड़े समय में ही विद्वान् बन जाता है। यहाँ महर्षि ने आर्ष ग्रन्थों को पढ़ने तथा विधि-विशेष (शब्द, अर्थ, सम्बन्ध तथा क्रिया सहित) से पढ़ने पर अधिक जोर दिया है। अनार्ष ग्रन्थों को पढ़ने का महर्षि दयानन्द बलपूर्वक निषेध करते हुए कहते हैं कि ''क्योंकि जो महाशय महर्षि लोगों ने सहजता से महान् विषय अपने ग्रन्थों में प्रकाशित किए हैं, वैसा इन क्षुद्राशय मनुष्यों के कल्पित ग्रन्थों में क्योंकर हो सकता है! महर्षि लोगों का आशय जहाँ तक हो सके वहाँ तक सुगम और जिसके ग्रहण में समय थोड़ा लगे, इस प्रकार का हेाता है और क्षुद्राशय लोगों की मनसा ऐसी होती है कि जहाँ तक बने, वहाँ तक कठिन रचना करनी, जिसको बड़े परिश्रम से पढ़ के अल्प लाभ उठा सकें, जैसे पहाड़ का खोदना, कौड़ी का लाभ होना और आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना ऐसा है कि एक गोता लगाना, बहुमूल्य मोतियों का पाना।''

महर्षि दयानन्द के मतानुसार विद्यार्थी को शिक्षा, व्याकरण (अष्टाध्यायी, प्रथमावृत्ति, धातुपाठ, उणादिकोष, शंका समाधान-वार्त्तिक-कारिका-परिभाषा पूर्वक द्वितीयावृत्ति, महाभाष्य), निरुक्त, छन्दशास्त्र, मनुस्मृति, वाल्मीकि रामायण व महाभारत (इन तीनों ग्रन्थों के विदुरनीति जैसे अच्छे प्रकरण), पूर्व मीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य, ईशादि दस उपनिषद्, वेदान्त, ब्राह्मण पूर्वक चारों वेद, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, अर्थवेद आदि ग्रन्थ इसी क्रम से पढ़ने चाहिए, क्योंकि ऐसा करके बीस या इक्कीस वर्ष के भीतर समग्र विद्या, उत्तम शिक्षा प्राप्त होके मनुष्य लोग कृतकृत्य होकर सदा आनन्द में रहें। जितनी विद्या इस रीति से बीस या इक्कीस वर्षों में हो सकती है, उतनी अन्य प्रकार से शतवर्षों में भी नहीं हो सकती।

ऋषि उद्यान में समय-समय पर आर्यजगत् के मूर्धन्य विद्वान् पधारते रहते हैं। इन दिनों विद्वान् समादरणीय सत्येन्द्र सिहं जी (मेरठ) पधारे हुए है। २३ मई से नित्यप्रति सायंकाल आपके उद्‌बोधन का लाभ ऋषि उद्यान आश्रमवासियों को प्राप्त हो रहा है। आप वैदिक सिद्धान्तों को बड़े ही सरल शब्दों में व्याख्यायित करते हैं। इस क्रम में धनोपार्जन, धार्मिक कृत्य, वैराग्य, जीवन सम्बन्धी पाश्चात्य विचारधारा आदि विषयों पर तथा-

स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्।
मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्।।

अथर्व. १९/७१/१

इत्यादि प्रसिद्ध मन्त्रों की व्याख्या के माध्यम से आश्रमवासियों को लाभान्वित कर रहे हैं।

२. चरित्र निर्माण शिविर - जैसा कि विदित है कि महर्षि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा, सभ्य व सांस्कृतिक समाज के निर्माण के लिए नवयुवकों व नवयुवतियों के चरित्र-निर्माण हेतु कृतसंकल्प है। इसके लिए ऋषि उद्यान में मार्गदर्शक सदैव समुपस्थित हैं तथा अपने प्रचार कार्यक्रम को गति दे रहे हैं। इस योजना के अन्तर्गत सभा के प्रचारक जहाँ देश के विभिन्न प्रान्तों में

जाकर चरित्र-निर्माण शिविर का आयोजन करते-करवाते हैं, वहीं प्रत्येक वर्ष ग्रीष्मावकाश में ऋषि उद्यान परिसर में युवक-युवतियों के लिए पृथक्-पृथक् आवासीय चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन किया जाता है।

इसी क्रम में ऋषि उद्यान में विगत १६-२३ मई को छात्रों के लिए चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में राजस्थान व अन्य प्रान्तों से पधारे लगभग १८५ छात्रों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। इस दौरान जहाँ आत्मरक्षा हेतु जूडो-कराटे, आसन-प्राणायाम, सूर्यनमस्कार, लाठी, भाला, तलवार, निशानेबाजी आदि का प्रशिक्षण दिया गया, वही आत्मिक व बौद्धिक विकास हेतु ध्यान, यज्ञ, वैदिक सिद्धान्तों का व्यवहारिक ज्ञान भी योग्य उपदेशकों-शिक्षकों के माध्यम से प्रदान किया गया। शिविर में बौद्धिक मार्गदर्शन हेतु डॉ. धर्मवीर, स्वामी विष्वङ्, डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा, सत्यवीर आर्य, भवदेव शास्त्री, श्री बलेश्वर मुनि, डॉ. मृत्युंजय शर्मा, वैद्य चन्द्रकान्त चतुर्वेदी आदि की सम्माननीय उपस्थिति रही। वहीं शारीरिक प्रशिक्षण-अनुशासन आदि के लिए श्री यतीन्द्र, नीरज आर्य, सुनील जोशी, पंकज आर्य, नरेन्द्र जाखड़, शिवपाल चौधरी, जितेन्द्र आर्य, दिनेश चौधरी, हिम्मत सिंह शेखावत, दिनेश गुप्ता, सूरज शास्त्री आदि का मार्गदर्शन प्राप्त हो सका।

शिविर के अन्तर्गत सातवें दिन नशा मुक्ति रैली का आयोजन किया गया, जिसे अजमेर के पुलिस उप-अधिक्षक सुरेन्द्र सिंह भाटी ने हरी झंडी दिखाकर प्रारम्भ किया। इस शिविर में छात्रों को बौद्धिक-शारीरिक व्यायाम के साथ-साथ संगीत, चित्रकला, हस्तलेखन आदि का भी प्रशिक्षण दिया गया तथा उस-उस विषय की परीक्षा भी ली गई। सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले छात्रों को समापन समारोह में गणमान्य नागरिकों की समुपस्थिति में पुरस्कृत किया गया। समापन समारोह में इन आर्यवीरों द्वारा प्रस्तुत विभिन्न शारीरिक प्रदर्शनों ने सभी का ध्यान अपनी ओर खींच लिया।

३. संस्कृत सम्भाषण शिविर - परोपकारिणी सभा वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्वों को संरक्षित करने के लिए कृतसंकल्प है। चूँकि वैदिक संस्कृति व सभ्यता के स्रोत वेद, उपवेद, ब्राह्मण-ग्रन्थ, उपनिषद्-आरण्यक, दर्शन आदि आर्ष साहित्य संस्कृत भाषा में ही निबद्ध हैं, अतः ऐसी देवभाषा संस्कृत भाषा का संरक्षण, संवर्धन करना सभा का लक्ष्य हो जाता है। वर्तमान समय में हम अपनी भाषा के महत्त्व से अनभिज्ञ होते जा रहे हैं, अतः आज 'संस्कृत-भाषा-अवबोधन' हमारे लिए कठिन लक्ष्य हो रहा है।

संस्कृत भाषा हमारी लोकभाषा बने, इस उद्देश्य से परोपकारिणी सभा अपने ऋषि उद्यान परिसर में ग्रीष्म ऋतु में प्रतिवर्ष एक आवासीय 'संस्कृत भाषा प्रशिक्षण शिविर' का आयोजन करती है। इसी क्रम में वर्ष २०१४ का शिविर दिनांक २४ से ३१ मई के मध्य आयोजित किया गया। हमारी भारतीय संस्कृति का मूलाधार संस्कृत भाषा है- इस भावना के साथ हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान, गुजरात व महाराष्ट्र से पधारे लगभग ५० शिविरार्थियों ने संस्कृत की सरलता, सरसता, आत्मनिष्ठता का ज्ञान प्राप्त किया। यह शिविर संस्कृत ज्ञान-पिपासुओं के लिए अहोरात्र-अखण्ड संस्कृतमय वातावरण समुपलब्ध करवाता है। शिविर में डॉ. धर्मवीर, डॉ. बद्रीप्रसाद पंचौली, डॉ. श्रीगोपाल बाहेती, डॉ. मोक्षराज आदि गणमान्य विद्वानों ने जहाँ संस्कृत भाषा के अध्ययन-सम्भाषण की महत्ता पर प्रकाश डाला, वहीं डॉ. निरंजन साहू, आचार्य भैरूलाल, डॉ. माधुरी, डॉ. आशुतोष पारीक, श्री जयदेव, श्री रजनीश आदि अध्यापकों ने शिविरार्थियों को प्रशिक्षण प्रदान किया। इति।।

आर्यो! धर्म रक्षा-धर्म प्रचार के लिये अब आगे आओ।

परोपकारिणी सभा अपने सर्व सामर्थ्य से ऋषि मिशन की सेवा में जुटी है। आर्यधर्म पर वार करने वालों का उत्तर देने के लिए परोपकारिणी सभा हर घड़ी तैयार रहती है। स्वामी स्वतन्त्रानन्द पीठ की स्थापना करके सुयोग्य विद्वान् को अरबी उर्दू के विद्वान् तैयार करने के लिये नियुक्त कर दिया। अब सभा के पास पढ़ाने वाले हैं। लगनशील सुयोग्य युवक तथा सेवानिवृत्त अनुभवी आर्य विद्यार्थी यहाँ तीन-तीन मास, छः-छः मास तथा वर्ष-दो वर्ष रहकर अरबी आदि पढ़कर पं. धर्मभिक्षु जी, पं. रामचन्द्र देहलवी जी तथा पं. शान्तिप्रकाश जी के रिक्त स्थान की भरपाई करें। इस पुण्य कार्य में दानी तथा समाजें सभा को उदारता से दान देकर सहयोग करें।

आर्यजगत् के समाचार

१. शिविर सम्पन्न - गुजरात में आर्यवीर दल के विकास के लिए वर्ष में दो बार शीत व ग्रीष्म कालीन प्रान्तीय स्तर के शिविर लगाये जाते हैं। विभिन्न आर्य संस्थाएँ शिविरार्थियों के भोजन-आवास की व्यवस्था कर इस संगठन को अपना सहयोग प्रदान करती हैं। अत: प्रतिवर्ष गुजरात के विभिन्न स्थानों पर शिविरों का आयोजन होता है।

इस वर्ष ग्रीष्म कालीन शिविर सन्त ओधवराम वैदिक गुरुकुल-भवानीपुर (कच्छ) में दिनांक ५ से ११ मई २०१४ तक लगाया गया। जिसमें गुजरात के विभिन्न स्थानों से १२५ आर्यवीर शामिल हुए। दूर क्षेत्र व गर्मी की परवाह किये बिना आर्यवीरों ने अपना मनोबल मजबूत रखा व प्रशिक्षण ग्रहण किया।

आर्यवीरों को आर्यवीर श्रेणी व शाखानायक श्रेणी का पाठ्यक्रम पढ़ाया गया, जिसे शारीरिक, बौद्धिक व चारित्रिक विषयों को निपुण शिक्षकों ने चलाया। प्रात: ४.३० से रात्रि ९.३० तक की निश्चित दिनचर्या में चले इस शिविर में आर्यवीरों ने पूरे मनोयोग से प्रशिक्षण ग्रहण किया।

शिविर में मुख्य शिक्षक ब्र. अरुण कुमार 'आर्यवीर' रहे। अन्य शिक्षकों ने अपना सहयोग दिया। शिविराध्यक्ष गुरुकुल के आचार्य स्वामी शान्तानन्द सरस्वती थे। शिविर का संचालन हसमुख परमान ने किया।

२. शिविर का समापन- केन्द्रीय आर्य युवती परिषद्, दिल्ली प्रदेश के तत्त्वावधान में आठ दिवसीय 'आर्य कन्या चरित्र निर्माण शिविर' का आर्य समाज, विशाखा एनक्लेव, पीतमपुरा में भव्य समापन हुआ। शिविर में ९५ बालिकाओं ने प्रात: ५ बजे से रात्रि १० बजे तक अनुशासित दिनचर्या में रह कर नैतिक शिक्षा, योगासन, सन्ध्या-यज्ञ, जूडो-कराटे, आत्म-रक्षा शिक्षण, डम्बल, लेजियम, स्तूप, लाठी, भाषण कला, व्यक्तित्व विकास एवं भारतीय संस्कृति के बारे में जानकारी प्राप्त की।

३. पं. गुरुदत्त विद्यार्थी जन्म दिवस- राष्ट्र एवं विश्व स्तर के वेदों के महान विद्वान्, वैदिक साहित्य व लेखक व पत्र-पत्रिकाओं के रचयिता मान्य श्री पं. गुरुदत्त विद्यार्थी का जन्म दिन २६ अप्रैल २०१४ को आर्य समाज रामनगर, रुड़की के प्रांगण में विशेष रूप से स्वास्तिक महायज्ञ के साथ मनाया गया। इस यज्ञ के ब्रह्मा श्री रामेश्वर प्रसाद सैनी रहे। यजमान के रूप में श्री विनोद कुमार सैनी रहे।

इस कार्यक्रम के मुख्य संयोजक तेजपाल सिंह आर्य ने विशेष रूप से उनके जीवन चरित्र एवं उनकी विशेष योग्यता पर विस्तार रूप से प्रकाश डाला।

४. वेद प्रचार- १७ दिनों के प्रवास के उपरान्त नर्मदांचल के वैदिक प्रवक्ता आचार्य आनन्द पुरुषार्थी होशंगाबाद वापस आ गए हैं। ३ से २० मई तक आप के सिंगापुर व मलेशिया के लक्ष्मी नारायण मन्दिर, आर्यसमाज मन्दिर सहित अनेक स्थानों पर वेदों के सिद्धान्तों पर प्रवचन हुए। इस्कान विचारधारा के बांग्लादेशी हिन्दुओं में विशेष रूप से आपको अपनी बात कहने का अवसर मिला। सिंगापुर में भारत की महामहीम राजदूत श्रीमती विजय ठाकुर सिंह जी व सिंगापुर के लोकसभा के पूर्व उपाध्यक्ष सरदार इन्द्रजीत सिंह (वर्तमान सत्ताधारी पीपुल्स एक्शन पार्टी के वरिष्ठ सांसद) से पुरुषार्थी जी ने पृथक्-पृथक् मुलाकात की, दोनों को आर्यसमाज का वैदिक साहित्य भेंट किया।

५. सम्मान- देहरादून, उत्तराखण्ड में ११ मई २०१४ को अग्निहोत्र धर्मार्थ ट्रस्ट द्वारा ११वें स्वामी दीक्षानन्द स्मृति दिवस के अवसर पर वैदिक साधन आश्रम, तपोवन के विशाल सभागार में सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान्, प्रख्यात साहित्यकार एवं भावनगर विश्वविद्यालय (गुजरात) के पूर्व प्रोफेसर एवं हिन्दी-विभागाध्यक्ष डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया (दिल्ली निवासी) को 'वेदश्री सम्मान' से विभूषित किया गया।

६. अस्वस्थ- यमुनानगरवासी आर्य समाज के सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री पं. ओमप्रकाश वर्मा विगत चार मास से गम्भीर अस्वस्थ चल रहे हैं। घुटनों की अक्षमता, नेत्रदोष व हृदयाघात जैसे कष्टों से पीड़ित श्री वर्मा जी उपचाराधीन हैं। उनके सुपुत्र का चलभाष संख्या- ०९४१६५४९१२७

७. आर्यसमाज रामनगर, रुड़की, जि. हरिद्वार, उत्तराखण्ड के चुनाव में **प्रधाना**- श्रीमती ऊषा रानी, **मन्त्री**- श्री रामेश्वर प्रसाद सैनी, **कोषाध्यक्ष**- श्री जे.डी. त्यागी को चुना गया।

८. आर्यसमाज श्रीमां हाउस, धन्ना तलाई, टोंक, राज. के चुनाव में **प्रधान**- श्री सुखलाल आर्य, **मन्त्री**- श्री पुरुषोत्तम पाटीदार, **कोषाध्यक्ष**- श्री रामरतन आर्य को चुना गया।

आर्यवीर दल शिविर, ऋषि उद्यान, अजमेर (१६ से २३ मई २०१४)

आर जे/ए जे/80/2013-2014 तक   प्रेषण : १५ जून, २०१४   ३९५९/५९

क्रांतिकारी ठाकुर केसरी सिंह जी बारहठ, कोटा

(सन् - १८७२-१९४१)

(सम्बन्धित विवरण पृष्ठ १६ पर देखें)

" When I See This Short-statured Man With Long Mustache, My Head Bows Down In Respect (..)" These Words Were Recorded in The Case-diary Of The Sadhu-murder Case Kota in March, 1914, For The Main Accused Keshri Singh Barhat, Kota, By The Investigating Officer Mr. Armstrong I.P., Inspector General Of Police, Indore State (.) Mr. Armstrong Pleaded In The Court Of The Special Judge, Kota, That The Accused Keshri Singh Be Hanged To Death.

(श्री फतेहसिंह मानव के सौजन्य से)

प्रेषक:

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर

(राजस्थान) - ३०५००१

डाक टिकिट

Design@ Mittal 9829797513